संस्कृत का सम्पूर्ण इतिहास ।

लेखकः—

परिडत-छज्जूराम-विद्यासागरः ।

मूल्यम् ।।=)

मास्टर मणिमालाया एकोत्तरशततमो मणिः (इतिहासविभागे २)

॥ श्रीः ॥

संस्कृत का सम्पूर्ण इतिहास

(छज्जूरामशतकद्वय)

लेखक—

पं० छज्जूराम शास्त्री विद्यासागर ।

प्रिन्सिपल—राधाकृष्ण संस्कृतकालेज,

महेन्द्रगढ ।

प्रकाशक—

मास्टर खेलाड़ीलाल ऐण्ड सन्स

संस्कृत बुकडिपो,

कचौड़ीगली बनारस सिटी ।

ब्रांच—मुरादपुर, (चौहट्टा) बाँकीपुर, पटना।

प्रचारार्थमूल्यं पञ्चाणकाः १।३

पं० छज्जूराम शास्त्री विद्यासागरः—

प्रस्तावना ।

यह बहुत समय से अनुभव किया जा रहा है कि संस्कृत के विद्वान् तथा छात्र अपनी विद्या के इतिहास से परिचित नहीं होते । इसका एक मात्र कारण यही है कि संस्कृत विद्वानों का ध्यान कभी इस ओर नहीं गया । इस ग्रन्थ में संस्कृत के प्रायः सभी विषयों के परीक्ष्यग्रन्थकारों का क्रमबद्ध इतिहास लिखने की चेष्टा की गई है ! स्थानाभाव के कारण विस्तार पूर्वक विचार नहीं किया गया । मैं समझता हूं कि इस प्रकार का यह प्रथम प्रयास है । प्रौढ विद्वान् से लेकर साधारण विद्यार्थी तक के उपयोगार्थ यह ग्रन्थ रचा गया है । हमारा विचार था कि यह सब संस्कृत में लिखा जावे । परन्तु सर्वसाधारण के उपयोग की दृष्टि से नीचे हिन्दी व्याख्यान ही दिया गया है जो कि वर्तमान समय के अनुसार अवश्य उपयोगी होगा ।

पुस्तक को देखकर संस्कृत साहित्य के उद्भट विद्वानों ने प्रशंसा पत्र दिये हैं । इस पुस्तक द्वारा संस्कृत परीक्षार्थियों को आशातीत लाभ पहुंचेगा । हमारा आग्रह है कि संस्कृत साहित्य के उत्थानमें भाग लेने वाले परीक्षक तथा अधिकारी वर्ग ऐसे २ प्रश्नों के पूछने के लिए आदेश देकर एक बड़ी कमी की पूर्ति करेंगे ।

इस पुस्तक के प्रूफ संशोधन में श्री मन्नालाल अभिमन्यु एम० ए० ने बड़ी सहायता की है । एतदर्थ आपको धन्यवाद ।

प्रस्तुत पुस्तकका प्रकाशनाधिकार काशीस्थ "संस्कृत बुक डिपो" के अध्यक्ष माननीय बाबू श्रीबैजनाथप्रसाद जीको है ।-

काशी
शिवरात्रि,
सं० १९९४

नम्र निवेदक—
लेखक ।

विषयानुक्रमणिका ।

❀ श्रीगणेशाय नमः ❀

संस्कृतस्यसंपूर्णेतिहासः

छज्जूरामशतकद्वयम् ।

प्रथमपरिच्छेदः ।

श्रीगणेशं नमस्कृत्य मामकीं नाम मातरम् ।
पितरं मोत्तूरामाह्वं मूलचन्द्रं च सोदरम् ॥१॥

भगवान्—गणेश को तथा मामकी नामक माताको, पण्डित मोत्तूराम नामक पिताको, कर्मकाण्ड महोपाध्याय पण्डित मूलचन्द्र नामक ज्येष्ठ भ्राताको, सादर एवं सप्रेम प्रणाम करके ॥

कुरुक्षेत्रमध्यवर्ति— रिटोलीग्रामवासिना ।
गौड़पण्डितवर्येण छज्जूरामेण शास्त्रिणा ॥२॥

श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त कुरुक्षेत्र भूमिके मध्यवर्ती, और जीन्द शहर से वारह कोश पूर्वकी ओर होने वाले-रिटोली ग्रामके निवासी, पण्डित नेकीराम पण्डित रामकृष्ण भट्टके अग्रज, गौड़ पण्डित छज्जूराम शास्त्री विद्यासागर, विद्यार्थियोंको संस्कृतका संपूर्ण इतिहास जानने के लिये अनेक ग्रन्थ, शिलालेख तथा ताम्रपत्रों केआधारसे ॥

वेदाङ्गोपाङ्गशास्त्रीयप्रवन्धज्ञानहेतवे ।
श्रीछज्जूरामशतकं सव्याख्यानं विधीयते ॥३॥

वेद, वेदाङ्ग उपाङ्ग सम्बन्धी ग्रन्थ, तथा उनके निर्माताओं के समयादि निर्णयार्थ-सप्रमाण सव्याख्यान—"छज्जूरामशतकद्वय" नामक 'संस्कृतेतिहास' को लिखते हैं ॥

"ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वणम्" इस छान्दोग्योपनिषत् के "ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वणः" इस मुण्डकोपनिषत् के "एकत्र वेदाश्चत्वारो भारतं चैतदेकतः" व्यास के "सप्तद्वीपा वसुमती, नवखण्डाः त्रयो लोकाः चत्वारो वेदाः" इस भाष्यकार पतञ्जलि के "चत्वारि शृङ्गाः" इस मन्त्र के व्याख्याकार-यास्क और सायण के कथनानुसार वेद चार हैं। ऋग्वेद का-पैलने,सामवेदका जैमिनिने, यजुर्वेद का वैशम्पायनने, और अथर्ववेद का सुमन्तु ने प्रचार किया। इनके चार ही प्रधान ब्राह्मण हैं। ऋग्वेद का-ऐतरेय, यजुर्वेद का शतपथ, सामवेदका-ताण्ड्य, अथर्वका गोपथ। इसी प्रकार इनकी १० प्रसिद्ध उपनिषदें हैं,—ऋग्वेदकी ऐतरेय, यजुर्वेद की-ईश, कठ, तैत्तिरीय, और बृहदारण्यक, सामवेदकी केन, और छान्दोग्य, अथर्ववेद की प्रश्न, मुण्डक, और माण्डूक्य। यज्ञोपवीत होने के बाद वेदों का पढ़ना ब्राह्मण का मुख्य कर्तव्य है। जैसे कि ब्रह्मसूत्र में लिखा है—"वेदाध्ययनं नित्य मनध्ययने पातात्। मनु भी लिखते हैं—"योऽनधीत्य द्विजो वेदानन्यत्र कुरुते श्रमम्। स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु प्राप्नोति सान्वयः ॥ "मन्त्रब्राह्मणात्मकः शब्दराशिर्वेदः" यह वेदका सामान्य लक्षण है। वेद अनादि और अपौरुषेय हैं। ऋग्वेद के मन्त्रभाग में विशेषरूपेण ईश्वर की स्तुति है। इसमें दश मण्डल, और दश हजार छ सौ मन्त्र हैं। यजुर्वेद के मन्त्रभाग में यज्ञादि की पूजन विधि है। वह शुक्ल और कृष्ण दो तरह का है। शुक्ल यजुर्वेद की संहिता में बारह सौ पचहत्तर मन्त्र हैं। सामवेद में भगवद्गुणगान है। इसके सम्पूर्ण मन्त्र पन्द्रह सौ उनञ्चास हैं। अथर्ववेद में विवाहादि की विधि है। इसमें बारह-हज़ार और तीन सौ मन्त्र हैं। महाभाष्य के अनुसार-ऋग्वेद की इक्कीस, सामवेद की एक हज़ार, यजुर्वेद की एक सौ एक, और अथर्ववेद की नौ शाखायें हैं। ये शाखायें माध्यन्दिनी प्रभृति-ब्राह्मण

ग्रन्थ हैं। इनमें से अब केवल-यजुः की दो, ऋग्वेद की दो, साम की तीन, अथर्व की दो, शाखायें मिलती हैं। वेद के दो भाग प्रसिद्ध हैं, १ मन्त्र, २ रा-ब्राह्मण। भाग, एकही अङ्गी के हुआ करते हैं। पुरुष का यदि दक्षिण भाग पुरुष है तो वाम भाग भी पुरुष ही मानना पड़ेगा। और वे दोनों ही अनादि, अपौरुषेय, और स्वतः प्रमाण, हैं। ("तच्चोदकेषु मन्त्राख्या" "शेषे ब्राह्मणशब्दः" पू० मी०) इन सूत्रों से ऊपरकी बात स्पष्ट हो जाती है। इसीलिये यह डिण्डिम बज रहा है—"वेदोऽखिलो धर्ममूलम्"। जनमेजय प्रभृति के इतिहास जिस तरह ब्राह्मण भाग में हैं, इसी तरह मन्त्र भाग में भी मिलते हैं। यथा—"आर्ष्टिषेणो होत्रमृषिर्निषीदन् देवापिः" ऋ० १०।९८।५। "रमध्वं मेवचसे—कुशिकस्य सूनुः" ऋ० ३।३३।५। "वृत्रहणं पुरन्दरम्" यजु० ११।३३ "इन्द्रो दधीचि अस्थभिः" ऋ० "युवं च्यवानं सनयं यथारथं पुनर्युवानं च रथाय तक्षथुः" अ० ७।८।१५४। "यस्येक्ष्वाकुरुपव्रते" ऋ० ९९। चत्वारिंशद्दशरथस्य शोणाः" ऋ० "रामेचोचमसुरे मघवत्सु" ऋ० "ब्राह्मण्योदेवकीपुत्रः" अथर्व०। काठक कौथुम ऐतरेय तैत्तिरेयादि नाम ब्राह्मणों का अध्ययन या प्रवचन से पड़ा। जैसा कि पू० मी० "आख्याप्रवचनात्"। ऋग्वेदका आयुर्वेद, यजुर्वेद का धनुर्वेद, सामवेद का गान्धर्व, अथर्वका शिल्प उपवेद है। वेदाङ्ग छः हैं–शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्यौतिष, छन्द। शिक्षा–याज्ञवल्क्यादि। कल्प-श्रौतसूत्र-कात्यायनादि। स्मार्तसूत्र-पारस्करादि। व्याकरण-पाणिनीयादि। निरुक्त-यास्कप्रणीत। ज्यौतिषसूर्यसिद्धान्तादि। छन्दः-पिङ्गलादि। उपाङ्ग भी छः हैं–न्याय और वैशेषिक। सांख्य और योग। पूर्वमीमांसा और उत्तरमीमांसा। छः अंग, छः उपांग, पुराण, और मन्वादि धर्मशास्त्र, ये चौदह विद्यायें हैं॥

चतुर्दशसमाश्रित्य शिवसूत्राणि पाणिनिः।
अष्टाध्यायिव्याकरणं रचयामास सूत्रतः ॥ ४ ॥

महर्षि पाणिनि ने चौदह शिव सूत्रों के आश्रय से अष्टाध्यायि-व्याकरण बनाया। सूत्रमात्र का लक्षण यह है—"अल्पाक्षरमसंदिग्धं सारवद्विश्वतोमुखम्"। "षडङ्गेषु व्याकरणं प्रधानम्" (म० भा०) के अनुसार वेद के छः अंगों में व्याकरण प्रधान है। क्योंकि व्याकरण के पढे बिना अन्य शास्त्रों का पढ़ना अशक्य है। और व्याकरणों में भी पाणिनीय व्याकरण ही सर्वोपकारक है। लिखा भी है—"पाणिनीयं महाशास्त्रं सर्वशास्त्रोपकारकम्। पाणिनि का-निश्चित समय नन्दराज्य काल है, जो कि विष्णु पुराण के मत से विक्रम संवत् से नौ सौ वर्ष पूर्व, और नवीन मत से चार सौ वर्ष पूर्ण है। इनकी माता का नाम दाक्षी, पिता का पाणिन, और जन्म स्थान का नाम शलातुर था। जो कि कन्दहार-पेशावर प्रान्त में है। परन्तु अध्ययन पाटलीपुत्र में हुआ था। पाणिनि ने एक काव्य भी लिखा था, जिसका नाम—"जाम्ववतीविजय" है। इसके वहुत से श्लोक "सुभाषितावल्यादि" में उद्धृत मिलते हैं। षड्गुरु शिष्य के कथनानुसार निरुक्तकर्ता यास्क, और छन्दःशास्त्रकर्ता पिंगल, भी पाणिनि के समकालीन थे। यह वात सत्य भी प्रतीत होती है क्योंकि यास्क ने "परः सन्निकर्षः संहिता" पाणिनि सूत्र निरुक्त में उद्धृत किया है। पाणिनि ने "यस्कादिभ्यो गोत्रे" लिखा है। और पिंगल ने भी "उरोवृहती यास्कस्य" लिखा है। निरुक्त पर स्कन्द स्वामी की, दुर्गाचार्य की, वर्तमान मुकुन्दझा की तथा हमारी टीका है। स्कन्द स्वामी का समय षष्ठशतक है। दुर्गाचार्य-सायण का समीप-कालीन था। उसने अपनी विवृति में "भोजस्येदं पुष्करिणीववेश्म" इस मन्त्र की व्याख्या में भोजराजा का निर्देश किया है। सायण ने दुर्गवृत्ति उद्धृत की है। पाणिनि की प्रशंसा में हमारे दो पद्य हैं। "सुरपतिशकटापत्यादिभिरथधीरैः प्रसादमपि नीता। श्रियमतिशयिता-मगमद्वाणी पाणिनिमहिम्नैव ॥१॥" "येन सर्वा वसुमती कृतैकेन विदु-

ध्मती। स प्रशस्यो न कस्यास्ति भगवान् पाणिनिर्मुनिः ॥२॥

तस्यैव न्यूनतां हर्तुं विशिष्टं वक्तुमप्यथ ।
कात्यायनो मुनिः स्वानि वार्तिकानि प्रणीतवान्॥५॥

कात्यायन मुनि ने पाणिनीय सूत्रों पर वार्तिक लिखे। "उक्तानुक्तदुरुक्तानां चिन्ता यत्र प्रवर्तते।" यह वार्तिक मात्र का लक्षण है। प्रयागसमीपवर्ति-कौशाम्बी(कोसम)नगरवास्तव्य-सोमदेवशर्मा के पुत्र वसुदत्ता के गर्भज, मुनिवर कात्यायन भी कथासरित्सागर के अनुसार पाणिनि के ही समकालीन थे। इन्होंने सूत्रों की न्यूनता को दो प्रकार से पूर्ण किया। कहीं पर सूत्रों से प्राप्त विधियों का निषेध, और कहीं पर अप्राप्त विधियों का विधान। "सर्वः सर्वं न जानाति महर्षिरपि कश्चन। कात्यायनमुनिः खल्वेतत्स्वकृत्यान्यदर्शयत् ॥३॥ इस हमारे पद्य के अनुसार मुनियों की कृति में भी त्रुटि रहना असम्भव नहीं। क्योंकि "प्रायेण मुह्यन्ति हि ये लिखन्ति" यह न्याय मनुष्य मात्र में व्यापक है। इन दोनों मुनियों का शरीरपात परस्परशाप से त्रयोदशी को हुआ, अतएव पाणिनीय व्याकरण त्रयोदशी को नहीं पढ़ा जाता॥ सब शास्त्रों के न पढ़ने की तिथियाँ ये हैं—"अष्टमी गुरुहन्त्री च शिष्यहन्त्री चतुर्दशी। अमापूर्णा द्वयोर्हन्त्री प्रतिपत् पाठनाशिनी॥ आकापौचौ द्वितीयायां पक्षयोरुभयोरपि। वेदाङ्गोपाङ्गशास्त्राणि न पठेत्सांप्रदायिकः॥

अप्रचारतमोमग्नसूत्रवार्तिकयोः कृते ।
महाभाष्येन्दुमातेने भगवान् श्रीपतञ्जलिः ॥६॥

सूत्र तथा वार्तिक का यथेष्ट प्रचार न देख कर गोनर्द-गोण्डा-देशीय गोणिका पुत्र महर्षि पतञ्जलि ने विक्रम से सौ वर्ष पूर्व महाभाष्य लिखा। इसका संस्कृत ऐसा सरल तथा गंभीर है, कि

वैसा किसी भी संस्कृत ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं होता । इसी कारण महाभाष्य की संस्कृत साहित्य में सर्वोच्च प्रतिष्ठा है । "सूत्रार्थो वर्ण्यते यत्र स्वपदानि च" यह भाष्यमात्र का लक्षण है । महाभाष्य के ही आधार पर अमरसिंह ने अमरकोश लिखा है, जैसा कि एकने लिखा भी है—"अमरसिंहो हि पापीयान् सर्वं भाष्यमचूचुरत् ।" अमरसिंह महावैयाकरण था । उसने स्वयं लिखा है—"अहं च भाष्यकारश्च कुशाग्रीयधियावुभौ । नैतौ शब्दाम्बुधेः पारं किमन्ये जडबुद्धयः ॥ पतञ्जलि पाणिनि में बड़ी श्रद्धा रखते थे, परन्तु त्रुटि निकालने में भी रुके नहीं । 'ऋलृक्' 'नाज्झलौ' 'न बहुव्रीहौ' आदिका खण्डन कर ही डाला । पाणिनि-कात्यायन-पतञ्जलि इन तीनों से निर्मित यह व्याकरण "त्रिमुनि" कहलाता है । और तीनों का यथोत्तर प्रामाण्य माना जाता है । पतञ्जलि शुंगवंशीय पुष्यमित्र के समकालीन थे । पुष्यमित्रने ग्रीक देश के यवनराजा मिलिन्द को युद्ध में हराया था । और एक अश्वमेध यज्ञ किया था । यह सब वर्णन पतञ्जलि ने भाष्य में किया है—जैसा कि—"अरुणद्यवनः साकेतमरुणद्यवनो मध्यमिकाम्" "इह पुष्यमित्रं याजयाम" इत्यादि । इसी पुष्य मित्र ने अशोक से नष्ट किये हुए वैदिक धर्मों का पुनरुद्धार किया । कुछ विद्वान् कहते हैं कि पुष्यमित्र ने अपने अश्वमेध यज्ञ के उपलक्ष्य में मालव संवत् चलाया था । परन्तु इस बात में कोई पुष्ट प्रमाण नहीं । हाँ, अश्वमेध यज्ञका निर्देश मालविकाग्निमित्र में है । पुष्यमित्र का पुत्र अग्निमित्र हुआ, जिसका वर्णन कालिदास के मालविकाग्निमित्रमें है । पुष्यमित्र तथा अग्निमित्रकी राजधानी विदिशा (भिलसा) थी । महाभाष्य की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"किं वर्ण्यते महाभाष्यमहत्त्वं खलु पण्डिताः । यच्छब्दतोऽतिसरलं कठिनं चार्थतो महत् ॥४॥

भर्तृहरिः कारिकाभिर्न्यायव्याकृतिमिश्रितम् ।

विबुधैरादृतं वाक्यपदीयं ग्रन्थमातनोत् ॥७॥

विक्रमादित्य के छोटे भाई दीर्घजीवि भर्तृहरि ने वाक्यपदीय ग्रन्थ बनाया । इनकी बनाई हुई सेतु नामक भाष्यव्याख्या भी थी, जिसका निर्देश गणरत्नमहोदधिकारने किया है, परन्तु वह अब उपलब्ध नहीं है । "अहोभाष्यमहोभाष्यमहो वयमहोवयम् । मामदृष्ट्वा गतः स्वर्गमकृतार्थः पतञ्जलिः ॥" इस पद्य से वाक्यपदीयकर्ता का महावैयाकरणत्व स्पष्ट होता है । शतकत्रयनिर्माता भी यही भर्तृहरि है क्योंकि इसने शतकत्रय में "मधु तिष्ठति वाचि योषिताम्" और "कदर्थितस्यापि हि धैर्यवृत्तेः" ये दो पद्य द्वितीय शतकवर्ति कविवर अश्वघोष के और "भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैः" यह पद्य अभिज्ञान शाकुन्तलका उद्धृत किया है । बहुत संभव है हरिस्वामी का ही भर्तृहरि उपनाम हो, क्योंकि हरिस्वामी ने शतपथ ब्राह्मण के भाष्य में अपना सब परिचय दिया है । यथा—"श्रीमतोऽवन्तिनाथस्य विक्रमस्य क्षितीशितुः । धर्माध्यक्षो हरिस्वामी व्याख्यां कुर्वे यथामति ॥ यदाब्दानां कलेर्जग्मुः त्रिंशच्छतकानि वै । चत्वारिंशत्समाश्चान्यास्तदा भाष्यमिदं कृतम् ॥" चीनीयात्री इत्सिंग के कथनानुसार भर्तृहरि का स्वर्गवास ७म शतक में हुआ । इत्सिंगने यह भी लिखा है कि भर्तृहरि ने ७ वार संन्यास लिया और ७ ही वार गृहस्थमें प्रवेश किया, इसका संकेत भर्तृहरिने भी किया है—"समारंभभग्नाः कति न कतिवारांस्तव पशो ।" भर्तृहरि का भागिनेय और विमलचन्द्रके पुत्र राजा गोविन्द (गोपी) चन्द्र का भी यही समय निश्चित है । क्योंकि बौद्धपरम्परा के अनुसार धर्मकीर्ति की मृत्यु गोविन्द्र चन्द्रके राज्यसमयमें हुई और यही समय गोरक्षनाथ का है । सुबन्धुकी वासवदत्ता में भर्तृहरि के एक पद्यका हूबहू अनुकरण है, वह पद्य है—"गुरुणा स्तनभारेण मुखचन्द्रेण भास्वता । शनैश्चराभ्यां पादाभ्यां रेजे ग्रहमयीव सा ॥" भर्तृहरिकी प्रशंसा में हमारा यह पद्य

है—"धन्यो भर्तृहरियोंगी येनापूर्वैव कल्पिता । स्वकीयग्रन्थे शब्दस्य ब्रह्मणश्चैकवाक्यता ॥५॥

वामनेन जयादित्यपण्डितेन च यत्नतः ।
पाणिनीयसूत्रवृत्तिः काशिकापि प्रकाशिता ॥८॥

वामन और जयादित्य ने काशी में काशिका वृत्ति बनाई। कौमुदी से पहले पाणिनीय व्याकरण का पठन-पाठन काशिका द्वारा ही सर्वत्र होता था। ७५२ के इत्सिंग ने काशिका का नाम लिखा है और काशिका में भारवि का स्मरण है, अतः काशिका-निर्माण-समय सप्तम शतक से पीछे या पहले का नहीं हो सकता। महाकवि माघ ने "अनुत्सूत्रपदन्यासा सद्वृत्तिः सन्निबन्धना" (इस पद्य में सद्वृत्तिसे इसी काशिकावृत्ति का स्मरण किया है।) काशिका की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"के न दृष्ट्वा प्रसीदन्ति काशिकामिव काशिकाम्। लिंगसूत्रात्मको यत्र विश्वनाथः प्रतिष्ठितः ॥६॥

जिनेन्द्रबुद्धः कृतवान् तट्टीकां न्यासनामिकाम् ।
हरदत्तो महाशैवस्तथैव पदमञ्जरीम् ॥ ९ ॥

विहारदेशीय जिनेन्द्रबुद्ध ने काशिका की टीका न्यास, और महाशैव श्रीकण्ठ के शिष्य कर्णाटकदेशीय हरदत्त-पण्डित ने पदमञ्जरी बनाई। इस न्यास से पहिले कुणि प्रभृति के भी न्यास थे। जिनेन्द्र बुद्ध का स्थिति समय अष्टमशतक और हरदत्त का नवम शतक है। महाकवि माघ ने पूर्वोक्त पद्य में न्यास से किस न्यास का स्मरण किया है यह जानना कठिन है। क्योंकि बाण ने भी हर्ष चरित में "कृतगुरुपदन्यासा लोक इव व्याकरणेऽपि" यहां एक न्यास का उल्लेख किया है। और भामह ने काव्यालंकार में। इन दोनों की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"न्यासकारं न को वेत्ति हरदत्तञ्च पण्डितम्। ययोर्मतं प्रमाणत्वेनोद्धृतं दीक्षितैरपि ॥७॥

प्रदीपाख्यं महाभाष्यग्रन्थव्याख्यानमद्भुतम् ।
प्रणिनाय महाविद्वान् कैयटो जैयटात्मजः ॥१०॥

कैयट पण्डित ने भर्तृहरिकृत सेतुव्याख्या के आश्रय से प्रदीप नामक भाष्यटीका लिखी । इस प्रदीप से भाष्य मंदिर चमक उठा । कैयट का समय विक्रमीय द्वादश शतक है । कैयट, काव्यप्रकाशकार मम्मटका छोटा भाई माना जाता है । इस दृष्टिसे यह काश्मीर निवासी था और इतना त्यागी तथा निरपेक्ष था कि एक दिन से अधिक अन्न घर में नहीं रखता था । कैयट की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है- 'नमस्तस्मै कैयटाय पण्डितेन्द्राय कुर्महे । यस्योत्तमप्रदीपेन दिदीपे भाष्यमन्दिरम् ॥८॥

प्रक्रियाकौमुदी रामचन्द्रेण निरमीयत ।
तत्प्रकाशं रचितवान् शेषश्रीकृष्णपण्डितः ॥११॥

काशीनिवासि-पण्डित रामचन्द्र ने क्लिष्ट सूत्रार्थ बोधक-प्रक्रियाकौमुदी बनाई । इसका स्थितिसमय विक्रमीय पञ्चदश शतक है । और शेषश्रीकृष्ण पण्डित ने प्रक्रिया प्रकाश बनाया । यह काशी के दक्षिणी महाराष्ट्र शेष वंश का था । और पारिजातहरणचम्पू कंसवध नाटक भी इसी का बनाया हुआ है । इसका स्थितिसमय विक्रमीय सप्तदश शतक प्रथम पाद तक है । शेषकृष्ण का बड़ा पुत्र शेषवीरेश्वर. पण्डितराज जगन्नाथका गुरु, और छोटा शेषगोविन्द,मधुसूदन स्वामी का शिष्य था । प्रक्रिया कौमुदी और प्रक्रिया प्रकाश के विषयमें हमारा यह पद्य है।"किं कौमुदीप्रकाशेन विना केनापि दृश्यते । प्रक्रियाकौमुदी तेन प्रकाशेन नियोजिता ॥९॥

भट्टोजिः पण्डितवरः पाणिनीयधुरन्धरः ।
सिद्धान्तकौमुदीं शब्दकौस्तुभं भूरियन्नतः ॥१२॥

सिद्धान्तकौमुदीव्याख्यां तथा प्रौढमनोरमाम् ।
निर्माय स्थापयामास यशः परममात्मनः ॥१३॥

शेष श्रीकृष्ण के शिष्य वाग्देवतावतार—भट्टोजिदीक्षित ने सिद्धान्त कौमुदी शब्दकौस्तुभ, और—"न कौमुदी भाति मनोरमां विना, न कौमुदी भाति मनोरमां विना" इसके अनुसार कौमुदी की टीका प्रौढ मनोरमा बनाकर अपना नाम संसार में अमर बना दिया । इसने कौमुदी में पाणिनीय सूत्रों को एक नयी शृंखला में बाँधा, जिससे कौमुदी की इतनी प्रशंसा हुई कि—"कौमुदी यदि कण्ठस्था वृथा भाष्ये परिश्रमः। कौमुदी यद्यकण्ठस्था वृथा भाष्ये परिश्रमः॥ अर्थात्—कौमुदी के आगे महाभाष्य भी भार गिना जाने लगा । परिणाम यह हुआ कि आज समस्त भारतवर्ष में पाणिनीय व्याकरण का एकछत्र साम्राज्य है । भट्टोजिदीक्षित, काशीनिवासी दाक्षिणात्य ब्राह्मण थे । और काशी में विक्रमीय सप्तदशशतक पूर्वभाग तक विद्यमान थे । इन्होंने वेदान्त शास्त्र अप्पदीक्षित से पढ़ा था । यह बात भट्टोजि के तत्वकौस्तुभ ग्रन्थसे स्पष्ट है। अप्पदीक्षित के भतीजे ने अपना समय नीलकण्ठ विजय चम्पू में १६९४ विक्रमाब्द लिखा है । भट्टोजि के भाई रङ्गोजिभट्ट के पुत्र कौण्डभट्ट ने भूषण में यथार्थ लिखा है—"वाग्देवी यस्य जिह्वाग्रे नरीनर्ति सदा मुदा । भट्टोजिदीक्षितमहं पितृव्यं नौमि सिद्धये ॥' कौमुदी के विषय में हमारा यह पद्य है—"नाकरिष्यद्यदिश्रीमान्भट्टोजिः कौमुदीमिमाम् । पाणिनीयं नामशेषमभविष्यत्तदा बुधाः॥

कौमुदीमेव सङ्क्षिप्य मध्यसिद्धान्तकौमुदी ।
कृता वरदराजेन तथैव लघुकौमुदी ॥१४॥

भट्टोजिदीक्षित के शिष्य-तैलङ्ग देशीय भट्ट वरदराज ने कौमुदी का सार ग्रहण करके मध्यकौमुदी तथा लघुकौमुदी बनाई ।

वरदराज का स्थितिसमय विक्रमीय सप्तदश शतक है। तार्किक-रत्नाकार वरदराज इस से पाँच सौ वर्ष प्राचीन है। लघुकौमुदी की सबसे सरल एवं परीक्षोपयोगी 'बालमनोरमा' टीका पं०सूर्यनारायण शुक्ल ने बनाई है। लघुकौमुदी के विषय में हमारा यह पद्य है--"इयं बालोन्मज्जनाय वरदेनानुकंपिना। सिद्धान्तकौमुदीसिन्धोर्लघुसिन्धुः समुद्धृता" ॥११॥

सिद्धान्तकौमुदीव्याख्यां ज्ञानेन्द्राख्यसरस्वती।
गूढतत्त्वावबोधाय निर्ममे तत्त्वबोधिनीम् ॥१५॥

सिद्धान्तकौमुदी की दूसरी टीका काशी निवासि ज्ञानेन्द्र-सरस्वती ने तत्त्वबोधिनी बनाई। रसगंगाधरकार जगन्नाथ के कथनानुसार ज्ञानेन्द्र, उसके पिता का वेदान्त शास्त्र गुरु था। जिससे इनका वेदान्त शास्त्रज्ञ होना भी स्पष्ट हो जाता है। ज्ञानेन्द्र का स्थिति समय भी विक्रमीय सप्तदश शतक ही है। इसकी प्रशंसा में हमारा यह पद्य है —"किं चाकरिष्यज् ज्ञानेन्द्रो यदि नो तत्त्वबोधि-नीम्। सिद्धान्तकौमुदीतत्त्वमभविष्यद्दुरासदम् ॥१२॥

कौण्डभट्टो रचितवान् वैयाकरणभूषणम्।
शब्दरत्नं महाविद्वान् हरिदीक्षितपण्डितः ॥१६॥

भट्टोजि के भाई रङ्गोजि भट्ट के पुत्र कौण्ड भट्ट ने भट्टोजि की कारिकाओं पर वैयाकरणभूषण बनाया। और लक्ष्मीनरहरि के पुत्र तथा शिघोरनरेश रामराजा के गुरु हरिदीक्षित ने प्रौढ मनोरमा की शब्दरत्न व्याख्या बनाई। हरिदीक्षित ने वेदान्त सूत्र वृत्ति में अपना समय गजेषुरसभू १६५८ शकाब्द दिया है तदनुसार १७९३ वि० है। भूषण की दर्पण और शब्दरत्न की भैरवी टीका प्रसिद्ध है। भूषण और शब्दरत्न की प्रशंसा में हमारे ये पद्य हैं—"किं भूषणं

विना भान्ति रम्या अपि हि कारिकाः । अङ्गना इव तेनात्र भूषणं परिकल्पितम् ॥१३॥ "यतो न रत्नहीना स्त्री शोभतेऽपि मनोरमा । ततो मनोरमाप्येषा शब्दरत्नेन भूषिता ॥१४॥

नागेशोऽकृतमञ्जूषां परिभाषेन्दुशेखरम् ।
भाष्यप्रदीपोद्योतञ्च लघुशब्देन्दुशेखरम् ॥१७॥

हरि दीक्षित के शिष्य नागेश भट्ट ने मञ्जूषा, परिभाषेन्दु, भाष्यप्रदीपोद्योत, सिद्धान्त कौमुदी की तीसरी टीका शब्देन्दुशेखर, बनाई। इन सब ग्रन्थों का विद्वत्समाज में आज बड़ा आदर है। परिभाषेन्दुशेखर में उन परिभाषाओं का व्याख्यान है, जो भाष्य-वार्तिक में पढ़ी गई हैं। मञ्जूषा में दार्शनिकरीति से वैयाकरण सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। नागेश भट्ट महाराष्ट्र ब्राह्मण था। इसका समय १८३५ तक निश्चित है। यह भी प्रयाग समीपवर्ति-शिंगोरपुराधीश उसी रामराजा का सभापण्डित था। नागेश को शेषावतार कहना अत्युक्ति नहीं, जैसा कि इसके विषय में हमारा यह पद्य है—"कृत्वा रूपत्रयं शेषो लोकानुग्रहकारकम् । योगसूत्रमहाभाष्यशेखरादीनकल्पयत् ॥ १५ ॥ इसके शिष्य काशी-निवासि पायगुण्डोपनामक वैद्यनाथ ने परिभाषेन्दु और शब्देन्दु की टीका लिखी। और वैद्यनाथ के शिष्य प्रयागवास्तव्य—भवदेव मिश्र के पुत्र भैरव मिश्र ने "भैरवी" परिभाषेन्दु की, और "चन्द्र-कला" शब्देन्दु की टीका लिखी। भैरव मिश्र ने अपना स्थिति-समय "नेत्राष्टवसुचन्द्राब्दे" अर्थात् (१८८२) सं० लिखा है। शब्देन्दु पर चिड़ावानिवासि पण्डितस्नेहिरामजी के पौत्र गुरुप्रसाद शास्त्री ने और भी कई टीकायें काशी से प्रकाशित की हैं। और परिभाषेन्दु पर आज तक बीसियों टीका लिखी गई हैं। परन्तु बालशास्त्री का "जटाजूट" और उसके शिष्य दाक्षिणात्य तात्या शास्त्री की 'भूति' और म० म० शिवकुमार शास्त्री के

शिष्य मैथिल जयदेव मिश्र की 'विजया' परिभाषेन्दु की साम्प्रतिक टीका हैं। १९७५ विक्रमाब्द में तात्याशास्त्री और शिवकुमार शास्त्री का, और १९८२ विक्रमाब्द में जयदेव मिश्र का काशी में स्वर्गवास हुआ।

सिद्धान्तकौमुदीटीका वासुदेवेन निर्मिता।
बालानामुपकाराय नाम्ना बालमनोरमा ॥१८॥

वासुदेव दीक्षित ने सिद्धान्तकौमुदी की चौथी टीका 'बालमनोरमा' बनाई। इसका स्थितिसमय अष्टादश शतक का चरम भाग है। वासुदेव चोलदेशीय तञ्जोरनगराधिपति सरभाजी तुकोजि भोसले के मन्त्री आनन्दराय मखी का प्रधान पण्डित था। मीमांसा के जैमिनीय सूत्रों की कुतूहलवृत्ति भी इसने लिखी है। वासुदेव की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"कौमुद्या मौलिकार्थानां बोधनाय कृतश्रमः। वासुदेवसुधीः केन विदुषा न प्रशस्यते ॥१६॥

फक्किकारत्नमञ्जूषा कनकेन प्रकाशिता।
फक्किकामर्मविवृतिर्हरिशंकरशर्मणा ॥१९॥

पण्डितेन्द्रदत्त के 'फक्किका प्रकाश' का आश्रय लेकर सिद्धान्त कौमुदीस्थ फक्किकाओं की व्याख्या 'मञ्जूषा' कनकलाल ठक्कुर ने, और 'विवृति' हरिशंकर शर्मा ने प्रकाशित की। ये दोनों मैथिल पण्डित इस समय विद्यमान हैं। इन दोनों की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"कनकात् कनकादिव फक्किकारत्नसंग्रहः। युज्यते मर्मविवृतिर्हरिशंकरशर्मणः ॥१७॥ विद्यार्थी-केवल फक्किकाओं को घोट कर काशी की मध्यमा—परीक्षा में पास तो हो जाते हैं, परन्तु मूल कौमुदी को वे ठीक नहीं पढ़ते। जिससे "छिन्ने मूले नैव शाखा न पत्रम्" की तरह वे व्याकरणशास्त्रीय बोध से शून्य रह जाते हैं।

और पञ्जाब में कौमुदी की परीक्षामें फक्किकाएं नहीं रक्खीं, यह बड़ी त्रुटि है । क्योंकि विना पंक्तियों के कौमुदी का आनन्द नहीं आता ॥

सुशीलनाम्नः पुत्रस्य वालकस्य कृते मया ।
सिद्धान्तकौमुदीव्याख्या प्रकाशाख्या प्रकाशिता २०

वैयाकरणशिरोमणि-स्वपितृव्य-पण्डित शिवदत्तजी शेखुपुरिया से सिद्धान्त कौमुदी, शेखर, महाभाष्य प्रभृति व्याकरण ग्रन्थ पढ़कर स्वपुत्र सुशील शर्मा के पाठनार्थ सिद्धान्तकौमुदी की सब टीकाओं से सरल पाँचवीं 'प्रकाश' टीका मैंने बनाई । इस टीका के विषय में ईश्वर से यह प्रार्थना है—"जयतु जगति पाणिनीयपक्षः जयतु च वार्तिकभाष्यकृद्विमर्शः । जयतु तदनु दीक्षितोक्तिवासः जयतु चिराय ममापि च प्रकाशः ॥१८॥"

इति श्रीछज्जूरामशतकद्वये व्याकरणग्रन्थकर्तृपरिचयनामकः प्रथमपरिच्छेदः समाप्तः ।

अथ तत्रभवान् चक्रे वाल्मीकिमुनिपुङ्गवः ।
रामायणं महाकाव्यं चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥२१॥

"कीर्तिरक्षरसंबद्धा चिरं तिष्ठति भूतले" के अनुसार धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष के देने वाले पवित्र रामचरित्र को अमर बनाने के लिये आदिकाव्य रामायण गङ्गासमीपवर्ति तमसातटनिवासी महर्षि वाल्मीकि ने लिखा । वाल्मीकि आदिकवि माने जाते हैं । जैसा कि एक कवि ने लिखा है—"जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाऽभवत् ।" श्लोक शब्द भी इन्हीं से चला, यथा—"आदिकवी—चतु-

राल्यौ कमलजवल्मीकजौ वन्दे । लोकश्लोकविधात्रीर्ययोर्भिदालेशमात्रेण ॥ महाकवि वाल्मीकि त्रेता युग में थे । और अपने लिखे अनुसार जन्म के ब्राह्मण थे । इनका स्मरण भारत के द्रोणपर्व में वेदव्यास जी ने किया है । यथा—"अपि चायं पुरागीतः श्लोको वाल्मीकिना भुवि । न हन्तव्याः स्त्रिय इति यद् ब्रवीषि प्लवङ्गम ॥ रामायण को संसार भर के कवियों ने स्वर्ग सोपान माना है । संस्कृत के महाकाव्यों की रचना और अलंकार शास्त्र में महाकाव्य का लक्षण इसी को आगे रख कर किया है । किं बहुना ? इसके विषय में ब्रह्मवाक्य यह है—"यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले । तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति ॥" और हमारे पद्य वाल्मीकि तथा रामायण के विषय में ये हैं—'श्रवणाञ्जलिपुटपेयं चक्रे रामायणाख्यमभृतं यः । तं वन्दे मुनिवर्यं कविधुर्यं वाल्मीकिं भक्त्या ॥१९॥ रायं पुत्रांश्च पौत्रांश्च मानं मान्येषु सद्गतिम् । यद्ददाति स्वपाठिभ्यो न तस्मै रोचयेत कः ॥२०॥

अष्टादशपुराणानि वेदव्यासो विनिर्ममे ।
भारतं कृष्णगाथाभिर्युतं भागवतं तथा ॥२३॥

अठारह पुराण, भारत, तथा भागवत, कुरुक्षेत्र देश निवासि महर्षि वेदव्यास जी ने बनाये । वेदार्थ ज्ञान में इनका भी उपयोग है जैसा कि महर्षि याज्ञवल्क्य ने लिखा है—"इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत् । बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरेदिति ॥ अपि च 'पुराणं मानवो धर्मः सांगो वेदश्चिकित्सितम् । आज्ञासिद्धानि चत्वारि न हन्तव्यानि हेतुभिः॥ब्रह्म, पद्म, विष्णु, शिव, देवीभागवत, नारद, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, लिङ्ग, स्कन्द, वराह, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड, ब्रह्माण्ड ये अठारह पुराण हैं । इनके ऊपर साम्प्रतिक शंकाओं के समाधान के लिये कुरुक्षेत्र मध्यवर्ति कौलग्राम निवासी पं० माधवाचार्यशास्त्री

का "पुराणदिग्दर्शन" और अमरोधा निवासी पं० कालूराम शास्त्री का "पुराणवर्म" ग्रन्थ द्रष्टव्य है। हिन्दुओं का अनर्घ रत्न महाभारत प्राचीन इतिहासका प्रामाणिक ग्रन्थ है। इसको सब आचार्यों ने पञ्चम वेद माना है। इसके आधार पर आज तक सहस्रों ग्रन्थ बन चुके। भारत के विषय में यह प्रसिद्धि है—"भारतं चेक्षुदण्डं च पर्वपर्वरसाधिकम्।" "नमः सर्वविदे तस्मै व्यासाय कविवेधसे। चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम्॥ भागवत के विषय में जो कहा जाय वही थोड़ा है। इन दोनों के विषय में हमारे ये पद्य हैं। "महा युद्धं बभूवात्र भारतं नाम भारते। न श्रुतं येन तद्वृत्तं तस्य जन्म निरर्थकम् ॥२१॥ भाति सर्वत्र शास्त्रेषु गण्यते श्रुतिसंनिभम्। वर्तते त्रिषु लोकेषु तरन्ति पाठिनो जनाः ॥२२॥ भगवान् व्यास का स्थिति समय कलि की प्रथम शताब्दी तक है। व्यास के विषय में यह पद्य है— "जयति पराशरसूनुः सत्यवतीहृदयनन्दनो व्यासः। यस्याऽऽस्यकमलगलितं वाङ्मयममृतं जगत्पिबति॥ और हमारा पद्य यह है—"कृतार्थोऽभूच्चतुर्वक्त्रः कृतार्थो वाल्मीकिर्मुनिः। लोकश्लोकविदि व्यासे जाते सति भुवस्तले ॥२३॥

स्वप्नवासवदत्तादि भासो नाटकमातनोत्।
नाटकीयत्वबोधार्थमद्भुतं बहुप्राकृतम् ॥२३॥

मध्यदेशीय—महाकवि भास ने-नाट्यकला के प्रचारार्थ स्वप्नवासवदत्तादि अनेक नाटक बनाये। जिनमें तेरह अब उपलब्ध हैं। भास, संस्कृत नाटक लेखकों में पहला है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भास प्रणीत-प्रतिज्ञा यौगन्धरायण नाटक का "नवं शरावं सलिलस्यपूर्णम्" यह पद्य उद्धृत हुआ है। अतः भास चाणक्य का समकालीन या किंचित्पूर्व कालीन प्रतीत होता है। चाणक्य का समय मेगास्थनीज के अनुसार ईशा से ३२२ वर्ष पूर्व हैं। कालीदास ने मालविकाग्निमित्र में भास को प्रथितयशा लिखा है। और

अभिज्ञानशाकुन्तलका "सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्" यह पद्यांश भास के अभिषेकनाटकस्थ "सेयं शक्ररिपोरशोकवनिका भग्नेति विज्ञाप्यताम्" पद्यांश का अनुकरण है। स्वप्नवासवदत्त की प्रशंसा में राजशेखर का यह पद्य प्रसिद्ध है—"भासनाटकचक्रेऽपि छेकैः क्षिप्ते परीक्षितुम्। स्वप्नवासवदत्तस्य दाहकोऽभून्न पावकः॥ बाणने अपने हर्षचरित में भास की बहुत प्रशंसा की है। भास के विषय में हमारा यह पद्य है—"भासो हासः कवित्वस्य जयदेवो यदुक्तवान्। तत्सत्यं को न मनुते कविकर्मसु बुद्धिमान् ॥२४॥

काव्यं प्रवरसेनेन सेतुबन्धमरच्यत ।
गाथासप्तशती शालिवाहनेन महीभृता ॥२४॥

प्रवरसेन काश्मीर का राजा था। इसने प्राकृत में सेतुबन्ध काव्य रचा। और दक्षिणप्रतिष्ठान नगर के राजा हाल सातवाहनापरनामक शालिवाहन ने गाथासप्तशती सङ्कलित की। कुछ विद्वान् कहते हैं, कि सेतुबन्ध की हस्तलिखित प्रतियों में "वाकाटकानां महाराजस्य प्रवरसेनस्य कृतौ" लिखा मिला है। वाकाटक प्रवरसेन का समय पंचम शतक है। और शालिवाहन का भी लगभग यही पञ्चमशतक है। हमारी सम्मति में इस प्रवरसेन का समय प्रथमशतक और शालिवाहन का द्वितीयशतक है। सेतुबन्ध और गाथासप्तशती के विषय में हमारे दो पद्य हैं—"जानकीमुक्तिलाभाय श्रीरामचरिताम्बुधौ। प्रवरसेनः सुग्रीवः सेतुबन्धमकल्पयत् ॥२५॥ "गाथासप्तशतीं मन्ये मुक्तासप्तशतीमहम्। ययैकया लब्धयापि कविलोकः प्रहृष्यति ॥२६॥ कविवत्सल शातकर्णि-शालिवाहन की गाथासप्तशती अनेक कवियों की गाथाओं का संग्रह है। इसमें चार गाथायें ३।८।१।६४।३।३।३।१६। प्रवरसेन के नामकी भी संगृहीत हैं। और "संवाहनसुखरसतोषितेन ददता तव करे लक्षम्। चरणेन विक्रमादित्यचरितमनुशिक्षितं तस्याः॥

२

५।६४।। इस गाथा में विक्रमादित्य की दानमहिमा है। बृहत्कथा में तथा गुर्जर देश भूपावली में भी इस विक्रमादित्य का वर्णन है। भविष्य पुराण के अनुसार तीन हजार चवालीस कलिवर्ष बीतने पर विक्रमादित्य विद्यमान था। यह विक्रमादित्य मालवापरनामक-विक्रमसंवत्प्रवर्तक उज्जैनपति हर्ष विक्रमादित्य माना जाना चाहिये। विक्रम से पूर्व शकों का भारत में आना इतिहास से सिद्ध है, उनका संहारक संभवतः यही है। अतः इसका 'शकारि' होना भी निर्विवाद है। पीटर्सन महोदय के शिलालेख से भी यह विक्रम सिद्ध हो गया है। डा० भाऊदाजी, जयशंकर जायसवाल प्रभृति विद्वान् हर्ष विक्रम का समय षष्ठशतक ५८५ मानते हैं, और कहते हैं कि कालिदासादि नवरत्न इसी की सभा में थे। भारतीय लिपिमाला में ओझाजी ने लिखा है कि हर्ष विक्रमादित्य ने ही शकगणों को हराकर शाक संवत् चलाया है। परन्तु अब विक्रमादित्य को हरानेवाला, और शाक संवत् के चलानेवाला तथा गाथा सप्तशती का कर्ता महाराज शालिवाहन ही माना जाता है। इसके समय में प्राकृत भाषा का बहुत प्रचार हुआ। बृहत्कथा निर्माता गुणाढ्य, और कातन्त्र व्याकरणकर्त्ता शर्ववर्मा इसी का सभापण्डित था। विद्वानों का मत है कि शालिवाहन आन्ध्र वंश का १७वां राजा था। इसने विक्रम से बचे हुए शकों का समूलोच्छेद करके शाक संवत् चलाया है॥

भासनिर्मितमाश्रित्य नाटकं चारुदत्तकम्।
शूद्रको मृच्छकटिकं दशांकं नाटकं व्यधात् ॥२५॥

अवन्तिनरेश महाकवि शूद्रक ने भास के चारुदत्त नाटक के आधार पर मृच्छकटिक नाटक लिखा। शूद्रक राजा भी था और महाकवि भी। जैसा कि एक जगह लिखा मिला है—"शूद्रकेणाऽसकृज्जित्वा स्वच्छया खड्गधारया। जगद्भूयोऽप्यवष्टब्धं वाचा स्वच-

रितार्थया ॥ प्राकृत भाषा की दृष्टि से मृच्छकटिक नाटकों में सर्वोच्च है। इसके प्रथम अङ्क में शकार के भाषण में "णाणक" शब्द का उल्लेख है। और चाणक्य महेन्द्र रुद्रदामन् आदि नामों का निर्देश है। अतएव मृच्छकटिक राजा रुद्रदामन् के बाद का बना हुआ है। सुराष्ट्रपति रुद्रदामन् के शिलालेख का समय २०७ अर्थात् विक्रमीय द्वितीय शतक है। नाणक मुद्राप्रचालक राजा कनिष्क का समय भी लगभग यही है। स्कन्द पुराण में शूद्रक को आन्ध्रभृत्यों का राजा माना है। और उसका समय भी यही ३२६० कलिवर्ष दिया है। यथा— "त्रिषु वर्षसहस्रेषु कलेर्यातेषु पार्थिवः। त्रिशतेषु दशन्यूनेष्वस्यां भुवि भविष्यति। शूद्रको नाम वीराणामधिपः ॥" अतः सर्वसम्मत्या शूद्रक का स्थिति समय विक्रमीय तृतीय शतक मानना आवश्यक है। शूद्रक के विषय में हमारा यह पद्य है—"प्रसादोत्कर्षमधुराः शूद्रकस्य गिरः स्तुमः। नाटकीयत्वयाथार्थ्यनिरूपणनिरूपमाः ॥२७॥

मालविकाग्निमित्रं च अभिज्ञानशकुन्तलम्।
तथा विक्रमोर्वशीयं कालिदासो महाकविः ॥२६॥
कुमारसंभवं मेघदूतं च रघुवंशकम्।
कृत्वा विस्तारयायास दशदिक्षु निजं यशः ॥२७॥

मालवीय महाकवि कालिदास ने तीन नाटक और तीन काव्य लिखकर अपना यश दश दिशाओं में फैला दिया। कालिदास उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य का सभापण्डित कहा जाता है। कालिदास का समय कुछ विद्वान् प्रथम शतक और कुछ पंचम और षष्ठ शतक मानते हैं। कालिदास ने "ज्योतिर्विदाभरण" नामक एक ज्यौतिष ग्रन्थ भी लिखा है। उसमें उसने लिखा है कि रघुवंशादि तीन काव्य भी मैंने लिखे हैं। ज्योतिर्विदाभरण का निर्माण समय उसने (३०६८)

कलि संवत् लिखा है, और यह भी लिखा है कि यह ग्रन्थ मैंने वराहमिहिर के मतानुसार लिखा है, वराहमिहिर का मत है कि— "आसन् मघासु मुनयः शासति पृथिवीं युधिष्ठिरे नृपतौ । षड्द्विकपंचद्वियुतः शककालस्तस्य राज्ञश्च ॥ इस मतानुसार कलि के (३०६८) वर्षों में से युधिष्ठिर शक के (२५६६) वर्ष निकाल लेने से (६३७) विक्रमाब्द ग्रन्थनिर्माणकाल हो सकता है । ग्रन्थ के अन्त में महाराजा विक्रमादित्य का वर्णन इस प्रकार दिया है । 'जिस महाराज ने रूम देश के शक राजा को, ९५ शक गणों को और सब दिशाओं को जीत कर शाक (सम्वत्) बाँधा था उनकी विक्रमादित्य पदवी है । और इनकी राजधानी उज्जयिनी है । इनकी सभा मे शंकु, वररुचि, वाराहमिहिर, अमरसिंह, आदि नव रत्न हैं । जिनमें मैं भी एक हूँ ।' अब यहां यह विचार किया जाता है कि यह विक्रमादित्य कौन सा था ? डा० भाण्डारकर प्रभृति विद्वान् इसको चन्द्रगुप्त द्वितीय, डा० भाऊदाजी–स्कन्दगुप्त हर्ष, और प्रो० म्याक्षमूलर म० म० हरप्रसादशास्त्री प्रभृति यशोधर्म मानते हैं । सब विक्रमों का चरित्र परस्पर मिल जाने से यह गड़बड़ फैल गई । चीनी यात्री 'फाह्यान' चन्द्रगुप्त के दरबार में आया था । इसने लिखा है— "चन्द्रगुप्त हिन्दूधर्म का पूरा पक्षपाती तथा संस्कृत विद्या का परम प्रेमी था । राजधानी पाटलिपुत्र थी । ऐतिहासिकों का मत है—कि चन्द्रगुप्त ने मालवा के शकों को हराकर मालवदेश की उज्जैन नगरी को राजधानी बनाया था । कालिदासादि नवरत्न इसी की सभा में थे । वे हरिषेण के समुद्रगुप्तविषयक ४०७ और कुमारगुप्त के मालव संवत् ५२९ के शिलालेखानुसार चन्द्रगुप्त विक्रम का समय पञ्चम शतक मानते हैं । अमरसिंह ने विक्रम के द्वितीय शतकवर्ति शालिवाहन के सभापण्डित शर्ववर्मा के कातन्त्र व्याकरण की दुर्गवृत्ति लिखी है । दुर्गसिंह अमरसिंह का ही

नाम था। जैसे कि—"दुर्गसिंहः स्वरचिते नामलिङ्गानुशासने। लभते स्मासरोपाधिं राजेन्द्रविक्रमेण सः॥ वररुचि के भगिनीपुत्र सुबन्धु कवि ने विक्रम को देखा था। यह बात उसके इस वासवदत्ता-पद्य से स्पष्ट होती है। "सारसवत्ता विहता नवका विलसन्ति चरति नो कंकः। सरसीव गतवति कीर्तिशेषं भुवि विक्रमादित्ये॥" सरस्वतीकण्ठाभरणकार भोज राजा ने भी—"केऽभूवन्नाढ्यराजस्य काले प्राकृतभाषिणः। केन श्रीसाहसाङ्कस्य काले संस्कृतभाषिणः॥ इस पद्य में शालिवाहनसे पीछे ही संस्कृतप्रचारक विक्रमादित्य का उल्लेख किया है। यही बात नौ सौ के अभिनन्द कवि ने भी—"हालेनोत्तमपूजया कविवृषा श्रीपालितो लालितः। ख्यातिं कामपि कालिदासकवयो नीताः शकारातिना॥ इस पद्य से सिद्ध की है। कालिदास के प्रतिपक्षी वसुबन्धु के शिष्य बौद्ध कवि दिङ्नाग का भी यही समय षष्ठशतक प्रतीत होता है। क्योंकि दिङ्नाग के शिष्य ईश्वरसेन के मित्र, आचार्य धर्मकीर्ति का निश्चित समय ७ म शतक है। कालिदास के मित्र कवि कुमारदास का भी महावंशग्रन्थके अनुसार यही ५८१ समयहै। विक्रम के द्वितीय शतकवर्ति-कुशानवंशी पेशावरराजधानीपति राजा कनिष्क के सभापण्डित अयोध्यानिवासी महाकवि अश्वघोषके पद्यांशोंका अनुकरण कालिदास ने किया है। यथा—"नवं वयो दीप्तमिदं वपुश्च [बु० च०] "नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च [र० वं०] "सोऽनिश्चयान्नापि ययौ न तस्थौ [सौन्दर०] "शैलाधिराजतनया न ययौ न तस्थौ [कुमार०] किमत्र चित्रं यदि कामसूर्भूः [र० वं०] किमत्र चित्रं यदि वीतमोहः" [सौन्दर०] मनोरथानामगतिर्न विद्यते [कु० सं०] "प्रमदानामगतिर्न विद्यते" [सौन्दर०] इत्यादि। सो क्या यह दोष है? नहीं,—क्योंकि सभी कवियों का उत्तरोत्तर उपजीव्योपजीवक भाव रहा है। शूद्रक और कालिदास ने भास का, माघ ने भारवि का, भवभूति नें कालिदास का, वाण ने सुबन्धु का, और कल्हण ने विल्हण का,

जयदेव ने मुरारि का अनुकरण किया है। और ये सभी महाकवि माने जाते हैं । बहुत विद्वानों का मत है कि अश्वघोष ने ही कालिदास का अनुकरण किया है, यदि कालिदास अश्वघोष से पीछे का होता तो 'मालविकाग्निमित्र' में भास और सौमिल्ल के साथ अश्वघोष का भी नामोल्लेख करता । और रघुवंश के छठे सर्ग में पाण्ड्य नरेश की राजधानी उरगपुर बतलाई हैं उरियाउर (उरगपुर) पाण्ड्य देश के राजाओं की प्रथम शतक में राजधानी था । अन्य विद्वान् कहते हैं कि कालिदास ने धार्मिक नाटककारों की गणना में बौद्धकाव्यकर्ता का नाम नहीं लिखा । और उरगपुर नाम नागपुर का है, जो छठे शतक में पाण्ड्यों की राजधानी था । कालिदास गुप्त राजाओं के चरित्रों से खूब परिचित था । अतएव उसने रघुवंश में कई जगह गुप्त शब्द का प्रयोग किया है । बहुत संभव है कि "व्यङ्ग्यार्थप्रियाः कवयः" के अनुसार "इन्दुं नवोत्थानमिवेन्दुमत्यै" (रघु०) इस पद्य में उसने चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य का निर्देश किया हो ? परन्तु समय की संगति ठीक नहीं बैठती । क्योंकि वराहमिहिर ने अपनी संहिता में अपना समय (५६२) वि० लिखा है । और इसी विक्रम के धर्माध्यक्ष हरिस्वामी ने शतपथब्राह्मण के भाष्य में अपना समय षट्त्रिंशच्छतकानि ५९६ दिया है । ज्योतिर्विदाभरण में ६३७ वि० समय और (५८०) अयनांश दिया है । इन सब समयों की एक वाक्यता करने से तथा—
"शंक्वादिपण्डितवराः कवयस्त्वनेके ज्योतिर्विदः समभवंश्च वराहपूर्वाः ॥ और "मत्तोऽधुनाकृतिरियं सति मालवेन्द्रे श्रीविक्रमार्कनृपराजवरे समासीत् ॥ इन ज्योतिर्विदाभरण पद्यों से प्रतीत होता है कि यह विक्रमादित्य या तो स्कन्दगुप्त हर्ष या जगतीम्पुन मालवनरेश यशोधर्म होगा ? कहते हैं—इसी के शिलालेख में सर्वप्रथम कालिदास का नाम लिखा मिला है । इसने हूणविजय के उपलक्ष्य में वीर विक्रम पदवी धारण

कर मालव संवत् को, जो कि उज्जैनके पालवगणने विक्रम की सहायता से शकों को जीत कर चलाया था; विक्रम संवत् नाम से प्रचलित किया। इसका राज्य समय ५८६ से ६४० तक माना जाता हैं। राजशेखर के कथनानुसार उसके समय तक तीन कालिदास हो चुके हैं। यदि यह बात ठीक सिद्ध हो जावे तो प्रथम कालिदास नाटकत्रयकर्ता था, जो प्रथम विक्रमादित्य का समकालीन रहा होगा। दूसरा काव्यत्रय तथा ज्योतिर्विदाभरणकार। और तीसरा राजशेखर का समकालीन पद्मगुप्त हो सकता है। विक्रमादित्य और कालिदास की प्रशंसा में हमारे दो पद्य हैं—"शिक्षणे महाराज्ञानां प्रजानां रक्षणे तथा। सतां मानेऽर्थिनां दाने विक्रमो विक्रमोपमः ॥२८॥ "संनिधौ कालिदासस्य सम्पूर्णाः कविसूक्तयः। ग्लानिं लभन्ते सूर्यस्य कुमुदिन्यो यथाऽमलाः ॥२९॥

कविभारविणाऽकारि श्रीकिरातार्जुनीयकम्।
भट्टिः कविर्महाविद्वान् भट्टिकाव्यं प्रणीतवान् ॥२८॥

दाक्षिणात्य महाकवि भारवि ने किरातार्जुनीय, और श्रीधरस्वामी के पुत्र महाकवि महावैयाकरण भट्टि या भर्तृस्वामी ने भट्टिकाव्य बनाया। भारवि काञ्ची के पल्लवराजा सिंहविष्णु का सभापण्डित था। ६९१ के आयहोल के शिलालेख में कालिदास के साथ भारवि का नाम खुदा मिला है। भारवि की स्थिति ६८० के लगभग तक मानी जाती है। किरातार्जुनीय में कालिदास के भावों का समावेश है। यथा—'आरोप्य चक्रभ्रममुष्णतेजाः त्वष्ट्रेव यन्त्रोल्लिखितो विभाति (रघु०) शस्त्राभिघातैस्तमजस्रमीश त्वष्ट्रा विवस्वन्तमिवोल्लिलेख। (किरात०) न चेत्त्रयं कर्मसु धर्मचारिणां त्वमन्तरायो भवसि च्युतो विधिः। (रघु०) ध्वंसते यदि भवादृशस्ततः कः प्रयातु वद तेन वर्त्मना। (किरात०) किमिव

हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् । (शकुन्तला) न रम्यमाहार्यमपेक्षते गुणम् । (किरात०) इत्यादि । भट्टि ने अपने काव्य में लिखा है कि मैंने इस काव्य को वलभी में महाराज श्रीधरसेन के शासनकाल में लिखा । गुजरात की प्राचीन राजधानी वलभी में, महाराज श्रीधरसेन का राज्यसमय सप्तम शतक उत्तर भाग निश्चित है । भट्टि काव्य के विषय में यह प्रसिद्धि है "अष्टाध्यायी जगन्माताऽमरकोशो जगत्पिता । सुबन्धुर्भट्टिकाव्यं च सर्वेषां विदुषां मते ॥ यह काव्य संस्कृत साहित्य में अपूर्व है । बाण ने हर्षचरित में भारवि और भट्टि का नाम सम्भवतः समकालीन होने से नहीं लिखा । भारवि की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"कालिदासादिकाव्येषु शतेषु खलु सत्स्वपि । भारवेरर्थगाम्भीर्यात् काव्यं काव्यशिरोमणि ॥३२॥

सुबन्धुकविना वासवदत्ताऽऽख्यायिका कृता ।
प्रत्यक्षरश्लेषमयी गद्यकाव्यमहाप्रसूः ॥२६॥

विक्रमसभारत्न वररुचि के भगिनीपुत्र महाकवि सुबन्धु ने गद्य काव्यों की जननी वासवदत्ता बनाई । सुबन्धु का स्थिति समय सप्तमशतकपूर्वभाग तक माना जाता है । क्योंकि ६७७ में निर्मित चरित में वासवदत्ता का उल्लेख है । और वासवदत्तामें, ७ म शतक के धर्मकीर्ति के ग्रन्थ का निर्देश है । सुबन्धु के विषय में हमारा यह पद्य है—"सुबन्धुः कविलोकस्य बन्धुरेव न संशयः । यत् श्लेषोक्तिमयं गद्यकाव्यमार्गमदर्शयत् ॥३३॥

बाणः कादम्बरीं चक्रे तथा हर्षचरित्रकम् ।
रत्नावलीं हर्षदेवो नागानन्दं च नाटकम् ॥३०॥

महाकवि बाण ने कादम्बरी और हर्षचरित, और महाराज हर्षवर्द्धन ने रत्नावली और नागानन्द नाटक बनाया । कादम्बरी आधी

चाखा ने, और आधी उसके पुत्र पुलिन्दभट्ट ने बनाई । जैसा कि धनपाल की सूक्तिमुक्तावली में लिखा है "केवलोऽपि स्फुरन् बाणः करोति विमदान् कवीन् । किम्पुनः क्लृप्तसंधानपुलिन्दकृतसंनिधिः ॥ कादम्बरी के विषय में यह प्रसिद्धि है—कादम्बरीरसज्ञानामाहारोपि न रोचते । बाण ने कादम्बरी में सुबन्धु की वासवदत्ता से काफी सहायता ली है । अतएव हर्षचरित में उसकी सबसे पहले प्रशंसा की । "कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया । इत्यादि । बाण–शाहाबाद(आरा)प्रान्तवर्ति प्रीतिकूट ग्राम का निवासी, और थानेश्वर तथा कन्नौज के महाराज हर्षवर्धन का प्रधान सभापण्डित था । महाकवि मयूर का भी यही समय है । बाण की प्रशंसा में यह पद्य प्रसिद्ध है—"अस्ति कविसार्वभौमो वत्सान्वयजलधिसंभवो बाणः । नृत्यति यद्रसनायां वेधोमुखलासिका वाणी॥" और हमारा पद्य यह है—'अलौकिकः कविर्बाणः कोपिकोविदसत्तमः । गैर्वाणीश्रीयद्वाणी सर्वस्य हरते मनः ॥ ३४ ॥ हर्ष के राज्यत्वकाल में चीनी यात्री ह्यूनसांग भारत में आया था । उसने हर्ष को चक्रवर्ती राजा लिखा है । हर्षकी मृत्यु चालुक्य द्वितीय पुलकेशी के हाथ से ७०५ विक्रमाब्द में हुई । इसी हर्ष ने लिङ्गानुशासन नामक एक कोष भी लिखा है । जिसकी टीका मीमांसक शबर स्वामीने लिखी है । हर्ष के विषय में हमारा यह पद्य है—'कारणं हि कवित्वस्य न ब्रह्मकुलसंभवः । क्षत्रिया अपि हर्षाद्याः कस्य हर्षाय नाभवन् ॥३२॥

भट्टनारायणश्चक्रे वेणीसंहारनाटकम् ।
दण्डी दशकुमाराख्यं गद्यकाव्यमकल्पयत् ॥३१॥

कान्यकुब्जदेशीय महाकवि भट्टनारायण ने वेणीसंहार, और दाक्षिणात्य महाकवि दण्डी ने दशकुमारचरित बनाया । भट्टना-

रायण का स्थितिसमय अष्टम शतक पूर्वभाग से आगे का नहीं हो सकता। क्योंकि दण्डी की अवन्तिसुन्दरीकथा में भट्टनारायण का नाम आया है। बंगाल के राजा आदिसूरने इस कवि को कान्यकुब्ज देश से बङ्गाल में बुलाया था। आदिसूर का निश्चित समय ७२८ है। राजशेखर के कथनानुसार दण्डी ने तीन ग्रन्थ बनाये। जिनमें दो तो प्रसिद्ध हैं, और तीसरा अवन्तिसुन्दरीकथा ही मानना चाहिये। जिसमें सुबन्धु और बाण का स्पष्ट नामोल्लेख है। दण्डी के काव्यादर्श में "लक्ष्म, लक्ष्मीं तनोतीति" पद्य में कालिदास की, और "अरत्नालोकसंहार्यमवार्यं सूर्यरश्मिभिः। दृष्टिरोधकरं यूनां यौवनप्रभवं तमः॥" इस पद्यमें कादम्बरी के शुकनास द्वारा दिये गये उपदेश की स्पष्ट छाया है। अतएव दण्डी का स्थिति समय अष्टमशतक पूर्वभाग निश्चित है। क्योंकि दण्डी भारवि के मित्र दामोदर का प्रपौत्र था और ८७१ के कविराजमार्ग ग्रन्थ में काव्यादर्श की स्पष्ट छाया है। दण्डी की प्रशंसा में यह पद्यांश बहुत प्रसिद्ध है—"कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः॥" और हमारा पद्य यह है—"दण्ड्याचार्यस्य वचनं चन्दनं मलयस्य च। सरसं हृदि विन्यस्य कस्य चेतो न तृप्यति॥३५॥ भट्टनारायण के विषय में हमारा यह पद्य है—"कालिदासो नाटकेषु मनो मोदयते यथा। भट्टनारायणोऽप्यन्तर्मोदं वितनुते तथा॥३६॥

मालतीमाधवं चक्रे महावीरचरित्रकम्।
उत्तररामचरितं भवभूतिर्महाकविः॥३२॥

महाकवि भवभूति ने उपर्युक्त तीन नाटक लिखे। यह विदर्भ देश के पद्मपुर का रहनेवाला, और कन्नौज के राजा यशोवर्मा का सभापण्डित था। इसके सर्वोत्कृष्ट उत्तररामचरित का एक पद्य वामन की सूत्रवृत्ति में उद्धृत हुआ है। अतएव भवभूति का स्थिति-

समय अष्टमशतक निश्चित है। डा० भाण्डारकर का भी यही मत है। करुणा रस की अभिव्यक्ति में भवभूति कालिदास से भी बढ़कर माना जाता है। जैसा कि इसकी प्रशंसा में हमारा यह पद्य है "भवभूतिकवेर्वाणी कालिदासगिरासमम्। सर्वत्र लभते साम्यं करुणे तु विशिष्यते ॥२७॥" मालतीमाधवके नवमाङ्क में भवभूति ने विक्रमोर्वशीय और मेघदूत का स्पष्ट अनुकरण किया है ॥

शिशुपालवधं काव्यं चक्रे माघमहाकविः।
महाकविर्मुरारिश्चाऽनर्घराघवनाटकम् ॥३३॥

दत्तक सर्वाश्रय पण्डित के पुत्र महाकवि माघ ने माघकाव्य और कुमारिल भट्ट के शिष्य मध्यदेशीय महाकवि मुरारि ने अनर्घराघव नाटक लिखा। माघ-कवि गुजरात प्रान्त के भिन्नमाल ग्राम का निवासी था। कुछ विद्वान् माघ को एकादश शतक के परमार भोज का समकालिक मानते हैं। परन्तु वह निर्मूल है। वास्तव में माघ एकलिङ्ग माहात्म्य के अनुसार अष्टम शतकवर्ति वापारावल प्रतिहारभोज का समकालीन था। यही समय माघ के पितामह सुप्रभदेव के आश्रयदाता गुजरात के राजा वर्मलात के ६८२ के वसन्तगढ शिलालेख से सिद्ध होता है। माघने भारवि का वहुत अनुकरण किया है। और 'किमु मुहुर्मुहुर्गतभर्तृकाः' यह पद्य भट्टि का अनुकरण है। माघ श्रीहर्ष के नागानन्द को भी जानता था। माघ के कई पद्य वामन और आनन्दवर्धन के ग्रन्थों में उद्धृत हुए हैं। और कन्नड़ी भाषा के कविराजमार्ग नामकग्रन्थ में माघ का नाम मिलता है। इस ग्रन्थ का निर्माण समय ८७१ है। अतएव माघ का स्थिति समय अष्टम शतक निश्चित है। माघ तथा उसके काव्य की प्रशंसा में दो पद्य प्रसिद्ध हैं। माघेन विघ्नितोत्साहा न क्रमन्ते पदक्रमे। स्मरन्तो भारवेरेव कवयः कपयो यथा॥" "उपमा कालिदासस्य भारवे-

र्थगौरवम् । दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः ॥ माघ के ही लगभग समय पंचतन्त्रकर्ता विष्णुशर्मा का है । क्योंकि उसने नागानन्द तथा माघ के पद्य पञ्चतन्त्र में उद्धृत किए हैं । विद्यार्णव नामक प्राचीन ग्रन्थ से प्रतीत होता है कि विष्णुशर्मा शंकराचार्य जी का समकालिक था । मुरारि का स्थिति समय नवमशतक है । मुरारि के विषय में हमारा यह पद्य है—"मुरारेस्तृतियः पन्थाः सत्यं लोके प्रसिद्ध्यति । दृश्यकाव्येऽपि यत्नेन श्रव्यशैली प्रदर्शिता॥३८॥ मुरारिपदचिन्तायां भवभूतेस्तु का कथा । मुरारिपदचिन्ता चेत्तदा माघे रतिं कुरु ॥

रत्नाकरो महाकाव्यं हरादिंविजयं व्यधाव ।
कविर्विशाखदत्तश्च मुद्राराक्षसनाटकम् ॥३४॥

काश्मीरिक महाकवि रत्नाकर ने हरविजय महाकाव्य और इन्द्रप्रस्थ प्रान्तीय गौड़ महाकवि विशाखदत्त ने मुद्राराक्षस नाटक लिखा । 'अङ्कोत्थनाटक इवोत्तमनायकस्य नाशं कविर्व्यधित यस्य मुरारिरित्थम् ॥ इस पद्य में रत्नाकर ने अपने पूर्ववर्ति मुरारि कवि का स्पष्ट निर्देश किया है । रत्नाकर, काश्मीर के राजा अवन्तिवर्मा का सभापण्डित था । यथा—"प्रयां रत्नाकरश्चागात्साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः" (राजत०) । इसके हरविजय महाकाव्य में ५० सर्ग हैं । यह सब से बड़ा महाकाव्य है । रत्नाकर की प्रशंसा में राजशेखर का यह पद्य है—"मा स्म सन्तु हि चत्वारः प्रायो रत्नाकरा इमे । इतीव सत्कृतो धात्रा कवी रत्नाकरोऽपरः ॥ और विशाखदत्त की प्रशंसा में यह पद्य है —"कविरमरः कविरचलः कविरभिनन्दो विशाखदत्तश्च । अन्ये कवयः कपयः चापलमात्रं परं दधति ॥ विशाखदत्त के नाटक में रत्नाकरका कुछ आभास मिलता है । और मुद्राराक्षसके अनेक पद्य दशरूपावलोक तथा सरस्वती कण्ठाभरण में उद्धृत हैं । महाकवि रत्नाकर तथा विशाखदत्त का स्थितिसमय विक्रमीय नवम तथा दशम शतक पूर्वभाग तक है ॥

बालरामायणं चक्रे कवीन्द्रो राजशेखरः ।
सरस्वतीकृपापात्रं नलचम्पूं त्रिविक्रमः ॥३५॥

महाराष्ट्र कवि राजशेखर ने बालरामायण, बालभारतादि चार नाटक लिखे। और कर्णाटकदेशीय कविचक्रवर्ति—भट्ट त्रिविक्रम ने नलचम्पू लिखा। राजशेखर कन्नौजके राजा महेन्द्रपालका तथा उसके पुत्र महीपालका गुरु था। जिनका समय शिलालेखों से दशम शतक निश्चित है यही समय राजशेखरका मानना चाहिये। खण्डप्रशस्तिकार हनुमत्कवि प्रणीत हनुमन्नाटक की तरह बालरामायण महानाटक है। इसकी रचना बाल्मीकि और भवभूति के आधार पर हुई है। राजशेखर के विषय में राजशेखर के ही लेखानुसार हमारा यह पद्य है। 'योऽभूत्पूर्वं बाल्मीकिर्वै यस्ततो भर्तृमेण्ठकः । भवभूतिश्च यः पश्चात् सततो राजशेखरः ॥३९॥ नवसारी शिलालेख के लेखक त्रिविक्रम का समय ९७२ निश्चित है। यह राष्ट्रकूट राजा इन्द्र तृतीय का सभापण्डित था। ब्रह्मसूत्रभाष्यकार भट्ट भास्कर त्रिविक्रम का पुत्र था। त्रिविक्रम के नलचम्पू का एक पद्य भोज के सरस्वतीकण्ठाभरण में उद्धृत हुआ है। त्रिविक्रम तथा उसके चम्पू के विषय में हमारे दो पद्य हैं—"बाणादयः कविवराः कविताप्रवीणा लोके कथानकमिदं न वृथा तथापि । भट्टत्रिविक्रमकृतिः कृतिनामलं हि चेतो मदं वितनुते कमपि स्वकृत्या ॥४०॥ "अर्धापि नलचम्पूर्हि कं न रञ्जयते नरम् । अनूरुरिव घर्मांशोरर्धेन्दुरिव धूर्जटेः ॥४१॥

साहसाङ्कं पद्मगुप्तः चम्पूं भोजो महीपतिः ।
दशावतारचरितं क्षेमेन्द्रकविरातनोत् ॥३६॥

महाकवि पद्मगुप्त (परिमलकालिदास)ने 'नवसाहसाङ्कचरित' और धारानरेश परमारवंशीय कविकल्पतरु महाराज भोज ने चम्पू रामा-

यण और काश्मीरिक महाकवि क्षेमेन्द्र ने दशावतारचरित, रामायण मंजरी, भारत मंजरी, प्रभृति अनेक ग्रन्थ लिखे। पद्मगुप्त के नवसाहसाङ्क चरित में भोज के पिता सिन्धुराज विक्रमादित्य का चरित्र वर्णित है। पद्मगुप्त ने यह काव्य अति वृद्धावस्था में लिखा था। और यह कवि भोज के पिता सिन्धुराज का ही सभा पण्डित था। इसकी प्रशंसा में हमारा यह पद्य है "भ्रम्यते यत्र तत्रैव तावत्सहृदयालिभिः। पद्मगुप्तः परिमलो यावत्खलु न लभ्यते ॥४२॥ राजा भोज का निश्चित समय उसके दानपत्र के अनुसार १०८२ है। उदयपुर-प्रशस्ति में भोज की प्रशंसा में यह पद्य लिखा है—"साधितं विहितं दत्तं ज्ञातं तद्यन्न केनचित् । किमन्यत् कविराजस्य श्रीभोजस्य प्रशस्यते ॥ और हमारा पद्य यह है—"योगज्ञो योगिभिर्भोजः शाब्दिकैरथ शाब्दिकः । वैद्यैर्वैद्यः सभामध्ये कविभिर्ददृशे कविः ॥४३॥ क्षेमेन्द्र-अभिनवगुप्तपादका शिष्य और काश्मीर के राजा अनन्त तथा कलश का सभापण्डित था। इसी अनन्त की स्त्री सूर्यवती देवी के मनस्तोष के लिये सोमदेव ने बृहत्कथा के आधार पर 'कथासरित्सागर' लिखा है। राजतरंगिणी के अनुसार महाराज अनन्त का राज्यत्व काल एकादश शतक है। कवि ने दशावतारचरित का निर्माणकाल ११२३ लिखा है। क्षेमेन्द्र की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"एकस्याप्यवतारस्य वर्णनात् क्षेमवान् जनः । स दशानां वर्णनेन क्षेमेन्द्रो न भवेत् कथम् ॥४४॥

विल्हणः कृतवान् काव्यं विक्रमाङ्कचरित्रकम् ।
कृष्णः प्रबोधचन्द्राख्यं नाटकं मोहकाटकम् ॥३७॥

महाकवि विल्हण ने विक्रमाङ्कचरित काव्य, और यतिवर कृष्णमिश्र ने प्रबोधचन्द्रोदय नाटक लिखा। विल्हण, श्रीनगरसमीपवर्ति खोनपुर ग्राम का रहनेवाला था। इसने दक्षिण देश के कल्याणपुर-

नरेश चालुक्य राजा षष्ठ विक्रम का चरित्र इस काव्य में लिखा है। इस विक्रम से पाँच विक्रमादित्य पहले हो चुके हैं। यथा—१ हर्ष, २ चन्द्रगुप्त द्वितीय, ३ यशोधर्म, ४ सिन्धुराज विक्रम, ५म वा, ६ छठ, चालुक्य विक्रम। बिल्हण का दूसरा नाम चौरकवि था, चौरपञ्चाशिका इसकी ही कृति है। इसी विक्रम की सभा में मिताक्षराकार विज्ञानेश्वर पण्डित था। कहते हैं—इस विक्रम ने भोजराजा की पुत्री भानुमती से विवाह किया था परन्तु यह असत्य प्रतीत होता है, क्योंकि यह विक्रम और बिल्हण दोनों भोज के उत्तरकालीन थे इस विक्रमने शिलालेखों के अनुसार ११-३३ से ११-३८ तक राज्य किया। बिल्हण के विषय में हमारा यह पद्य है। "महाकविर्बिल्हणो हि चोरनाम्ना प्रसिध्यति। यत्तस्य कवितादेवी कविचित्तमचूचुरत ॥४५॥ कृष्णमिश्र चन्देलराजा—कीर्तिवर्मा का समकालीन था। जिसका शिलालेख सं० ११५६ का है। सर्वाङ्गपूर्ण इस नाटक के आधार पर आज तक कई नाटक लिखे गये हैं यथा—१४ सौ के वेदान्तदेशिक वेङ्कटनाथ का 'संकल्प सूर्योदय' १२ सौ के यशःपाल का 'मोहराज पराजय' १७ सौ के कवि कर्णपूर का "चैतन्यचन्द्रोदय" और १८ सौ के आनन्दराय मखीका 'विद्यापरिणाय' आदि। कृष्ण मिश्रके विषयमें हमारा यह पद्य है—"यदि वः परमानन्दे काव्यानन्दे च कामना। तदा विधीयतां प्रीतिः कृष्णमिश्रकृतिं प्रति ॥४६॥

गीतगोविन्दमकरोज्जयदेवमहाकविः ।
राघवपाण्डवीयं च कविराजो विलक्षणम् ॥३८॥

महाकवि जयदेव ने 'गीतगोविन्द' और कविराज ने 'राघवपाण्डवीय' काव्य लिखा। जयदेव वङ्गराजा विद्वत्कल्पद्रुम लक्ष्मणसेन का सभापण्डित था इसी राजा की सभा में दुर्घट वृत्तिकार शरणदेव

था। जिसने अपनासमय—"शाकमहीपतिवत्सरमाने—एकनभौनवपंच-विधाने" लिखा है। यह समय १२२६ विक्रम बैठता है। जयदेव का भी लगभग यही समय मान लेना चाहिये। जयदेव की प्रशंसा में कविवर हरिहर ने यह पद्य लिखा है—"जयदेवकवेः श्रुत्वा गोविन्दानन्दिनीगिरः। वालिशाः कालिदासाय स्पृहयन्तु वयन्तु न॥ जयदेव बंगाल देश के किन्दुविल्वग्रामका, निवासी था। यथा—'किन्दुविल्वसमुद्रसंभवरोहिणीरमणेन" और कविराज, आसाम देश के जयन्तीपुर का निवासी था। इसका भी निश्चित समय द्वादश शतक है। राघवपाण्डवीय काव्य की शैली का ही महाकवि धनञ्जय विरचित द्विसन्धान महाकाव्य है। कविराज के विषय में उसका यह पद्य है—"सुबन्धुर्बाणभट्टश्च कविराज इति त्रयम्। श्लेषोक्तिकाव्यनिपुणाः चतुर्थो विद्यते न वा॥

श्रीहर्षः काव्यमतुलं नैषधं कवितार्किकः।
प्रसन्नराघवं चक्रे जयदेवकवीश्वरः॥ ३६॥

काल्पनिक महाकवि श्रीहर्ष ने नैषधचरित महाकाव्य बनाया। और जयदेव ने प्रसन्नराघवनाटक। इसी शैलीका हमारा 'कल्याणराघव' नाटक है। पाण्डित्यप्रकर्ष में 'नैषध'काव्यों में सर्वोच्च है। इसी लिए इसका पण्डित समाज में बड़ा आदर है। नैषध के ही आधार पर त्रयोदशशतकवर्त्ति जगन्नाथपुरी के महाकवि कृष्णानन्द का "सहृदयानन्द" और पंचदश शतकके वामन भट्टका "नलाभ्युदय" काव्य लिखा गया। प्रसन्नराघवनाटक भी पाण्डित्यपूर्ण है। श्रीहर्ष और जयदेव दोनों ही कवितार्किक थे। श्रीहर्ष का जन्म काशी में हुआ था। यह काशी तथा कन्नौज के राजा विजयचन्द्र तथा जयचन्द्र का सभापण्डित, और भट्ट मम्मट का भानजा था। इस का समय विक्रमीय द्वादशशतक उत्तर भाग और जयदेव का

चतुर्दशशतक पूर्व भाग है। विदर्भदेशीय कवीन्द्र जयदेव ने चोर कवि विल्हण की और हर्ष की प्रशंसा की है। चोर को कविता-कामिनी के केशपाशकी, और हर्ष को हर्ष की उपमा दी है। इन दोनों की प्रशंसा में हमारे दो पद्य हैं—"माघः साघत्वमापन्नः भारवेर्भा न भासते । जाते जगति सर्वज्ञे श्रीहर्षे कविहर्षदे ॥४७॥ अनुप्रासविशिष्टेन कवित्वेन सुचारुणा । जयदेवस्तार्किकोऽपि कैर्मतो न कवीश्वरः ॥४८॥

श्रीनीलकण्ठविजयं नीलकण्ठकविर्व्यधात् ।
श्रीशिवराजविजयमम्बिकादत्तपण्डितः ॥४०॥

महाकवि नीलकण्ठ ने 'नीलकण्ठविजयचम्पू' और 'कविवर अम्बिकादत्त व्यास ने 'शिवराजविजय' बनाया। महाराष्ट्रवीर शिवाजीका जन्म १६८४ में और निधन १७३७ में हुआ, मेवाड़पति महाराणा प्रताप, इनसे ८४ वर्ष पूर्व १६५३ में मरे। नीलकण्ठ शिवकाञ्चीवास्तव्य अप्पय दीक्षित के भ्राता अच्चादीक्षितका पौत्र था। इसने अपना समय नीलकण्ठ विजय की समाप्ति में १६९४ विक्रमाब्द लिखा है। शिवलीलार्णव और गङ्गावतरण काव्यभी इसकेही बनाये हुए हैं। विश्वगुणादर्शचम्पू औरलक्ष्मीसहस्र स्तोत्र का निर्माता महाकवि वेङ्कटाध्वरी नीलकण्ठ का समकालिक था। १६९३ के चम्पूभारतकार अनन्त का भी यही समय है। अम्बिकादत्तव्यासका १९५२ विक्रमाब्द में काशी में स्वर्गवास हुआ। इन दोनों के विषय में हमारे दो पद्य हैं—"स नीलकण्ठः सुकविः प्रशस्यः कस्य नास्ति हि। नीलकण्ठवर्णनेन नीलकण्ठत्वमापयः ॥ ४९ ॥ "बाणदण्डिसुबन्धूनां काणत्वान्मास्मभूत्त्रयम् । इति ज्ञात्वाम्बिकादत्तश्चतुर्थो विधिना कृतः॥५०॥

देवीप्रसादसुकविः पुण्यश्लोकोदयं व्यधात् ।
सनातनधर्मविजयमखिलानन्दपण्डितः ॥४१॥

कान्यकुब्जब्राह्मण काशीनिवासि वाग्वल्लभकर्ता कविवरदुःख-भञ्जनके पुत्र देवीप्रसाद कवि ने पुण्यश्लोकोदय(नलदमयन्ती)नाटक लिखा। और अखिलानन्द कविने सनातनधर्म विजयकाव्य बनाया। म०म० कवि देवीप्रसाद का १९८८ विक्रमाब्दमें काशी में स्वर्गवास हुआ। हमारे मित्रकविरत्नअखिलानन्द, अनूपशहर यू० पी० के निवासीसनाढ्य ब्राह्मण हैं। इन दोनों के विषय में हमारे ये पद्य हैं—"देवीप्रसादःसुकविर्जातो देवीप्रसादतः। इतीव श्रूयतेऽस्माभिः सत्यंचापि हि मन्यते ॥५१॥ "कविरत्नाखिलानन्दोऽखिलनन्दप्रदोभुवि। सद्यः कृतैः सुललितैर्बालगम्यैः सुभाषितः ॥५२॥

विद्वज्जनमनोहारि मयाकारि समासतः।
सुल्तानचरितं काव्यं दुर्गाभ्युदयनाटकम् ॥४२॥

सुल्तान चरित काव्य और दुर्गाभ्युदय नाटक मैंने बनाये। यह सुलतान कन्नौज के प्रतिहार महाराजा महेन्द्रपाल का पुत्र था। दुर्गाभ्युदय में जगज्जननी भगवती दुर्गा का पवित्र चरित्र है। सुल्तान चरित और दुर्गाभ्युदय नाटक के विषय में भट्ट बन्धुओं के दो पद्य हैं—"सुल्तानचरिते काव्ये प्रादुर्भूते भुवस्तले। केषां न विदुषा-मिच्छा पातुं तत्कवितामृतम् ॥ सदा सेव्यं सदा सेव्यं दुर्गाभ्युदयनाट-कम्। यत्र गद्ये च पद्ये च सर्वत्रैव चमत्कृतिः ॥ "स्वास्थ्यं प्रतिभाभ्या सौभ-क्तिविद्वत्कथा बहुश्रुतता। स्मृतिदाढ्र्य मनिर्वेदः कारणमष्टौ हि काव्यस्य ॥

इति श्रीछज्जूरामशतकद्वये काव्यग्रन्थकर्तृपरिचयनामको
द्वितीयपरिच्छेदः समाप्तः ॥

नाट्यशास्त्रं रचितवान् भरतो मुनिपुंगवः।
वात्स्यायनेन रचितं कामशास्त्रं मनोहरम् ॥४३॥

आर्यावर्तदेशीय महामुनि भरत ने नाट्यशास्त्र, और वात्स्यायन ने कामशास्त्र बनाया। नाट्य और अलङ्कार शास्त्र के उपलब्ध ग्रन्थों में भरत मुनि का नाट्यशास्त्र ही सब से प्राचीन है। अग्निपुराण में इससे बहुत सहायता ली गई है, अतएव नाट्यशास्त्र का निर्माण समय उसके कथनानुसार त्रेतायुग है यथा—"त्रेतायुगे संप्रवृत्ते मनोर्वैवस्वतस्य च। नाट्यवेदं मुनिश्चक्रे चतुर्वेदाङ्गसंभवम्॥ अग्नि पुराण में भरत मुनि का नामोल्लेख भी है। मल्लनागनामक यह वात्स्यायन न्यायभाष्य और अर्थशास्त्र के निर्माता से भिन्न प्रतीत होता है। क्योंकि इसने—"कर्तर्या कुन्तलः शातकर्णिः शालिवाहनो मलयवतीं महादेवीं जघान।" इस प्रकार शालिवाहनका नामोल्लेख किया है। और "इत्यर्थचिन्तकाः" ऐसा लिखा है। परन्तु सुबन्धु से पहले का है, क्योंकि सुबन्धु ने वासवदत्ता में कामशास्त्र का नामोल्लेख किया है। नाट्यशास्त्र पर अभिनवगुप्त की और कामशास्त्र पर यशोधर की टीका प्रसिद्ध है। नाट्यशास्त्र और कामशास्त्र की प्रशंसा में हमारे दो पद्य हैं—"वेदं तु द्विजमात्रं हि वेदाकाशमिवाद्भुतम्। नाट्यवेदो विजयते सर्वेषां रञ्जयन्मनः॥ ५३॥ "कामानन्दो महानेव ब्रह्मानन्दात्प्रतीयते। सुख्येको ब्रह्मवित् किन्तु सुखिनौ कामिनावुभौ॥ ५४॥

काव्यालङ्कारमकरोत् ग्रन्थमाचार्यभामहः।
काव्यादर्शो विरचितः कविना दण्डिना तथा॥४४॥

भामह ने काव्यालंकार और दण्डी ने काव्यादर्श लिखा। भामह दिङ्नाग का पश्चाद्वर्ती था। क्योंकि उसने वसुबन्धु और दिङ्नाग का प्रत्यक्ष लक्षण अपने ग्रन्थ में दिया है। वररुचि के प्राकृत,प्रकाश का टीकाकार भी यही भामह है। कहते हैं इस के पिता रक्रिलगोमिन् और वैयाकरण चन्द्रगोमिन् दोनों भाई थे। बाण

भट्ट,भट्टि और दण्डीने भामह का अपने अपने ग्रन्थों में अनुकरण किया है। भट्टि ने सभी अलंकार भामह के अनुसार लिखे हैं। और अन्तिम श्लोक हूबहू उसके अन्तिम श्लोक के अनुसार है। दण्डी ने तो उसका वहुत ही अनुकरण किया है। अतः भामह का स्थिति समय षष्ठशतक और दण्डीका अष्टम शतक पूर्वभाग है। भामह काश्मीरिक, और दण्डी (कान्चीय) दाक्षिणात्य था। काव्यालंकार पर भट्टोद्भट की, और काव्यादर्श पर सांप्रतिक पण्डित वङ्गीय जीवानन्द की तथा वर्तमाय पञ्चनदीय पं० नृसिंह देवकी टीका है। भामह और दण्डि के विषय में हमारा यह पद्य है–"आलङ्कारिक इत्याख्या भामहाद्भामविन्दत। तस्याद्विवचनं जातं जाते दण्डिनि पण्डिते ॥५५॥

विद्वान् भट्टोद्भटश्चक्रे काव्यालङ्कारसंग्रहम् ।
काव्यालङ्कारसूत्राणि वामनाचार्यपण्डितः ॥४५॥

भट्टोद्भट ने काव्यालंकारसंग्रह, और वामन ने काव्यालंकार सूत्र तथा वृत्ति वनाई। राजतरंगिणी के अनुसार भट्टोद्भट, काश्मीर के राजा-जयापीड का सभापति, और वामन जयापीड का मंत्री था। "विद्वान् दीनारलक्षेण प्रत्यहंकृतवेतनः। भट्टोऽभूदुद्भटस्तस्य भूमिभर्तुः सभापतिः॥ बभूवुर्भूरिकवयो वामनाद्याश्चमन्त्रिणः॥ (रा०त० ४।४९७) इन दोनों काश्मीरिक पण्डितों का स्थिति समय विक्रमीय नवम शतक है। काव्यालंकार संग्रह की १०मशतकवर्ति भट्टेन्दुराजरचित लघुवृत्ति, और वामनालंकारकी १५सौकीकामधेनु टीका प्रसिद्ध है। राजशेखर और आनन्द वर्द्धन ने वामन का स्मरण किया है। यह वामन काशिकाकार वामन से भिन्न है। क्योंकि इसने ८४५ में उत्पन्न श्रीशंकराचार्य के अमरुशतक का पद्य उद्धृत किया है॥

काव्यालंकारमातेने ग्रन्थमाचार्यरुद्रटः ।
ध्वन्यालोकं तथा श्रीमानाचार्यानन्दवर्धनः ॥४६॥

शतानन्दापर नामक रुद्रट ने काव्यालंकार, और काव्यपुरुषावतार आनन्दवर्द्धन ने ध्वन्यालोक बनाया। आनन्दवर्धन ९४० के अवन्तिवर्माका सभापण्डित था । रुद्रट का काव्यालंकार अलंकारका विस्तृत ग्रन्थ है। और ध्वन्यालोक ध्वनिमार्ग का सर्व प्रथम अत्यन्त प्रामाणिक ग्रन्थ है । इसके कर्ता आनन्दवर्धन की प्रशंसा में राजशेखर का यह पद्य है—"ध्वनिनातिगभीरेण काव्यतत्त्वनिवेशिना। आनन्दवर्धनः कस्य नासीदानन्दवर्धनः॥ ये दोनों काश्मीर निवासी थे । इनका स्थिति समय दशम शतक पूर्व भाग है। आनन्दवर्धन ने शंकराचार्य के अमरु शतक का स्मरण किया है। रुद्रटालंकार की ११२५ के नमि साधु कृत टीका प्रसिद्ध है। रुद्रट ने अपने विषय में यों लिखा है-"शतानन्दापराख्येन भट्टवामकसूनुना। साधितं रुद्रटेनेदं सामाजाधीमतां हितम् ॥

चक्रेऽभिनवगुप्तोहि ध्वन्यालोकस्यलोचनम् ।
तथैव काव्यमीमांसां राजशेखरपण्डितः ॥४७॥

भट्टेन्दुराज के शिष्य अभिनवगुप्त ने ध्वन्यालोक की टीका लोचन, और राजशेखर ने काव्य मीमांसा बनाई। लोचन के विषय में अभिनवगुप्त ने यों लिखा है—"किं लोचनं विना लोको भाति चन्द्रिकयापि हि। तेनाभिनवगुप्तोऽत्र लोचनोन्मीलनं व्यधात् ॥ अभिनवगुप्त का स्थिति समय १०७१ विक्रमाब्द है। यह शैव मतावलम्बी काश्मीरिक पण्डित था। महाराष्ट्र देशीय कविराज राजशेखर का स्थिति समय अभिनवगुप्त से कुछ पूर्व १०म शतक है। क्योंकि १०१७ में विरचित यशस्तिलक में राजशेखर का नामनिर्देश है। काव्यमीमांसा पर मरु प्रान्तीय चिड़ावा ग्राम निवासी पण्डित रामजी लाल के पुत्र वर्तमान पं० मधुसूदन शास्त्री की विवृत्ति है। काव्यमीमांसा के विषय में हमारा यह पद्य है—"साहित्यशास्त्रतेजोभिर्विशेषेणोज्ज्वलीकृते। न कस्य काव्यमीमांसारत्ने स्नेहो विजृम्भते ॥५६॥

वक्रोक्तिजीवितं चक्रे कुन्तको नामपण्डितः ।
तथाव्यक्तिविवेकं श्रीर्महिमा महिमान्वितः ॥४८॥

काश्मीरिक कुन्तक पण्डित ने वक्रोक्ति जीवित और काश्मीरिक भट्ट महिमाचार्य ने व्यक्ति विवेक ग्रन्थ बनाया । वक्रोक्ति जीवित में राजशेखर के कुछ पद्य उद्धृत हुए हैं । अतः यह राजशेखर के बाद का है । वक्रोक्ति जीवित के विषय में हमारा यह पद्य है—"भात्यलंकारयुक्तापि वक्रोक्तिरहितागिरः । अनेकतारायुक्तापि रात्रिश्चन्द्राद्दते यथा ॥ ५७ ॥ नैयायिक महिमभट्ट का स्थिति समय लगभग १०६५ विक्रमाब्द है । इसने लोचन तथा वक्रोक्तिकार का खण्डन अपने ग्रन्थ में 'सहृदयमानिनः केचित्' 'केचिद्विद्वन्मानिनः' कह कर किया है । अतः कुन्तक इससे कुछ पहले का है । खाद्यखण्डन में श्रीहर्ष ने महिमभट्ट की बहुत प्रशंसा की है । यथा—"दोषं व्यक्ति विवेकेऽमुं कविलोकविलोचने । काव्यमीमांसिषु प्राप्तमहिमा महिमाऽद्भुतः ॥ व्यक्ति विवेक में ध्वन्यालोक का खण्डन है । इस पर राजानक रुय्यक की टीका है ॥

दशरूपकमातेने ग्रन्थरत्नं धनञ्जयः ।
धनिको दशरूपस्यालोकंव्याख्यानकं तथा ॥४९॥

धनञ्जय ने दशरूपक और छोटे भाई धनिक ने दशरूपावलोक व्याख्या लिखी । दशरूपक की रचना नाट्यशास्त्र के आधार पर हुई । धनञ्जय अपने कथनानुसार मुञ्जराजा का सभापण्डित था । यथा—'विष्णोः सुतेनाथ धनञ्जयेन विद्वन्मनोरागनिबन्धहेतुः । आविष्कृतं मुञ्जमहीशगोष्ठीवैदग्ध्यभाजा दशरूपमेतत् ॥ मुञ्जका निश्चित राज्यत्वकाल तत्कालीन सुभाषितरत्नसंदोहकार अमित गति के कथनानुसार १०५० विक्रमाब्द है । इन दोनों भाइयों का स्थिति

समय भी लगभग यही मानना आवश्यक है। अवलोक में पद्मगुप्त के नवसाहसाङ्कचरित के पद्य उद्धृत हैं॥

भोजः सरस्वतीकण्ठाभरणं कृतवान्नृपः।
काव्यप्रकाशं निर्माय मम्मटो लब्धवान् यशः॥५०॥

मुञ्जाके भतीजा धारानरेश सर्वज्ञ भोजदेव ने सरस्वती कण्ठाभरण, और काश्मीरिक वाग्देवतावतार मम्मट भट्ट ने साहित्य शास्त्र निर्यास काव्यप्रकाश बनाया। भोज पण्डितों का बड़ा आश्रयदाता था। ठीक भी है—'नृपस्तु विबुधाश्रयः कति न सन्ति कुक्षिम्भराः।' भोजराजा का दानपत्र १०७८ संवत् का विद्यमान है, और उसके उत्तराधिकारी जयसिंह का ग्यारह सौ सात का शिलालेख विद्यमान है। जिससे यह सिद्ध होता है कि भोजराज का शासन ११०६ के बाद नहीं था। कहते हैं, भोज ने सोमनाथ मन्दिर नाशक मुहम्मद गजनवी को जाते समय युद्ध में हराया था। कण्ठाभरणपर १४सौ के रत्नेश्वर मिश्र की टीका है। मम्मट ने "यद्विद्वद्भवनेषु भोजनृपतेस्तत्त्यागलीलायितम्। इस श्लोक में भोज के दानकी प्रशंसा की है। और इस के ग्रन्थ की १२१६ की संकेत टीका है। अतः मम्मट का स्थिति समय ग्यारह सौ छः, और संकेत का १२१६ के मध्यमें अर्थात् द्वादश शतक है। वेदभाष्यकार उव्वट और महीधर का भी यही समय है। काव्य प्रकाश पर बीसियों टीका हैं जिनमें १७७९ के भीमसेन की सुधासागरी, और १९३९ के भट्ट वामनाचार्य की बालबोधिनी टीका प्रसिद्ध है। सरस्वती कण्ठाभरण तथा काव्य प्रकाश के विषय में हमारे ये पद्य हैं—"भोजराजकृतिर्ह्येषाकस्यतोपाय नोविदः। यां कण्ठाभरणत्वेन स्वीचकार सरस्वती॥५८॥ "साहित्यवाग्दैवतस्य मम्मटस्य कृतिर्विदाम्। आल्हादयतिचेतांसि कुमुदानीव चन्द्रिका॥ ५९॥

चक्रेऽलंकारसर्वस्वं रुय्यकः कविनायकः ।
वाग्भटो वाग्भटालंकारं च काव्यानुशासनम् ॥५१॥

काश्मीरिक राजानक रुय्यक ने अलंकार सर्वस्व और जैन पण्डित वाग्भट ने वाग्भटालंकार बनाया । रुय्यक ने अपने ग्रन्थ में काव्यप्रकाश का खण्डन किया है । १२१६ में निर्मित माणिक्यचन्द्र के काव्यप्रकाश संकेत में अलंकारसर्वस्व का भी निर्देश है । अतः रुय्यक का स्थिति समय भी द्वादश शतक ही निश्चित है । ११९२ का श्रीकण्ठचरित कर्ता मङ्खकवि रुय्यक का शिष्य था, यही समय कह्लण का है । सर्वस्वपर १३सौ के जयरथ की विमर्शिनी टीका है । यही समय हरचरित चिन्तामणिकार जयद्रथ का है । वाग्भट दक्षिण के चालुक्य वंशीय राजा जयसिंह का अमात्य था । इसका स्थिति समय १२१३ विक्रमाब्द है । गुर्जरदेशीय जैन पण्डित हेमचन्द्र का काव्यानुशासन भी इसी समय का बना हुआ है । वाग्भटालंकार-पर सिंहदेव गणि की तथा वर्तमान पं० उदयवीर शास्त्री की टीका है । अलंकारसर्वस्व और वाग्भटालंकार के विषय में हमारे ये पद्य हैं—"अलंकारैर्विरहिता विधवेव सरस्वती । इत्यलंकारसर्वस्वं रुय्यकस्तत्कृतेऽकृत ॥६०॥" किमक्षराणां भारेण निःसारेण मनीषिणः । स्वल्पापि वाग्भटकृतिः कृतिमानसहारिणी ॥६१॥

चन्द्रालोकं रचितवान् जयदेवो मनोहरम् ।
एकावलीं महाविद्वान् विद्याधरसुधीस्तथा ॥५२॥

पीयूषवर्ष जयदेव ने चन्द्रालोक, और महापण्डित विद्याधर ने एकावली ग्रन्थ लिखा । जयदेव ने चन्द्रालोक में अलंकार सर्वस्व के कई लक्षण लिए हैं । और इसके निर्मित प्रसन्नराघव का निर्देश १३८७ में विद्यमान शिङ्गभूपाल ने तथा 'कदली कदलीपद्य' दर्पण-

कारने उद्धृत किया है। अतः जयदेव मिश्र का समय चतुर्दश शतक पूर्वभाग है। यह विदर्भ देश के कुण्डिनपुर का रहने वाला था। चन्द्रालोक पर १६४० के प्रद्योतन भट्ट की शरदागम, वैद्यनाथ पायगुण्डे की रमा, और गागाभट्ट की राका टीका प्रसिद्ध है। चन्द्रालोक की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—" सुधाक्षराणांभरोहि चमत्कारोज्झितो बुधाः। स्वल्पाक्षरापि पीयूषकृतिः पीयूषवर्षिणी ॥६२॥ चन्द्रालोक प्राचीन ग्रन्थ शरदागम के आधार पर बना है। जैसा कि इस विषय में अप्पदीक्षित ने लिखा है—"चन्द्रालोको विजयतां शरदागमसंभवः। हृद्यः कुवलयानन्दो यत्प्रसादादजायत ॥ एकावलीकेविषय में हमारा यह पद्य है— "साहित्यरत्नमञ्जूषा एषा एकावली कृतिः। विद्याधरीया कैर्धीरैः श्लाघनीया न वर्तते ॥६०॥ १३१७ के दानपत्रानुसार विक्रमीय चतुर्दश शतकके पूर्व भागमें उत्कल देश का राजा प्रताप नरसिंहविद्यमान था। उसीकी प्रशंसामें विद्याधरने एकावली लिखी। यह बात विद्याधरने "करोमि नरसिंहस्य चाटुश्लोकानुदाहरन् ॥" इस पद्य से स्पष्ट की है। इसका टीकाकार रघुवंशादि षट् काव्य व्याख्याता आन्ध्रदेशीय कोलाचल मल्लिनाथ है। जिसका निश्चित समय मल्लिनाथ के पुत्र दुर्गा सप्तशतीटीकाकार वीरभद्र के "वर्षे रामाङ्कचन्द्रे शिवनयनयुते चित्रकूटोपकण्ठे" इस उक्त्यनुसारसोलह सौ तेंतीस है॥

काकतीयकुलोत्पन्नरुद्रभूपालतुष्टये ।
चक्रे प्रतापरुद्रीयं विद्यानाथसुधीवरः ॥५३॥

तैलङ्ग देशीय विद्यानाथ ने प्रतापरुद्रीय ग्रन्थ लिखा। यह ग्रन्थ काव्यप्रकाश और अलंकार सर्वस्व के आधार पर एकावली की तरह वीररुद्र के यशोगान में लिखा था। वीररुद्र आन्ध्र देश का राजा था। इसका समय चतुर्दश शतक का उत्तर भाग १३७७ है, यही उसके

सभापण्डित विद्यानाथ का भी जानना चाहिये। यही समय रसमञ्जरी रसतरङ्गिणीकारमैथिल पं० भानुदत्तका तथा काव्यकल्पलतावृत्तिकार अमरचन्द्रका है। इसका टीकाकार-मल्लिनाथ का पुत्र कुमारस्वामी है। प्रतापरुद्रीय के विषय में हमारा यह पद्य है "साहित्यविद्यानाथेन विद्यानाथेन धीमता। कृता प्रतापरुद्रीयकृतिः कृतिविभूषणम् ॥६४॥

साहित्यदर्पणं चक्रे विश्वनाथकवीश्वरः ।
काव्यप्रदीपमथ च गोविन्दो नाम ठक्कुरः ॥५४॥

कविराज विश्वनाथ ने सर्वाङ्गपूर्ण साहित्य दर्पण, और गोविन्द ठक्कुर ने 'काव्यप्रदीप' लिखा। विश्वनाथ कलिङ्गदेशीय उत्कल ब्राह्मण था। इसका पितामह १३१७ में नरसिंह राजा का सभा पण्डित था। विश्वनाथ ने १३५० सम्वत् के जयन्त भट्ट का स्मरण किया है, और अलाउद्दीन खिलजी की जीवितावस्था का एक पद्य दर्पण में लिखा है। अलाऊद्दीन की मृत्यु १३७३ में हुई थी। अतः विश्वनाथ का स्थिति समय चतुर्दश शतक का उत्तर भाग है। यही समय शार्ङ्गधर पद्धतिकार का है। साहित्य दर्पण पर १७५७ के रामचरण तर्कवागीश की विवृति, साम्प्रतिक जीवानन्द की विमला, वर्तमान पं० शिवदत्त की रुचिरा टीका है। गोविन्द ठक्कुर मैथिल ब्राह्मण था, इसने अपने काव्य प्रदीप में "अर्वाचीनास्तु" कह कर विश्वनाथ का मत दिया है। अतः यह विश्वनाथ से लगभग १०० वर्ष पीछे १६६८ के कमलाकरभट्ट ने प्रदीपका उल्लेख किया है। का है। प्रदीप पर वैद्यनाथ और नागेश भट्ट की टीका है। दर्पण के विषय में हमारा यह पद्य है "साहित्यशास्त्रसर्वस्वाद्विश्वनाथविनिर्मितात्। साहित्यदर्पणात्साहित्यसर्वज्ञत्वमाप्यते ॥६५॥

शौद्धोदनि प्रणीतानां सूत्राणां कवितार्किकः ।
व्याख्यानं केशवश्चक्रे नाम्नालंकारशेखरम् ॥५५॥

केशव मिश्र ने बौद्ध शौद्धोदनि के अलंकार सूत्रोंका व्याख्यान 'अलंकार शेखर' लिखा। तर्क भाषादि अनेक ग्रन्थकर्ता केशव मिश्र उत्तर देश का रहने वाला, तथा राजा माणिक्यचन्द्र का सभापण्डित था। कोट काँगरा नरेश माणिक्यचन्द्र का शासनकाल विक्रमीय षोडश शतक उत्तर भाग तक है। १६३३ के मल्लिनाथ ने केशवकोश को प्रमाणित किया है। अलंकार शेखर के विषय में हमारा यह पद्य है— "'तर्ककर्कशविज्ञोऽपि साहित्यज्ञो भवेदिह। अलंकारशेखरोऽयं बोधनं नः करोति वै ॥६६॥

चक्रे कुवलयानन्दं श्रीमदप्पय्यदीक्षितः।
साहित्यचित्रमीमांसां वृत्तिवार्तिकमप्यथ ॥५६॥

द्रविड़ पण्डित अप्पय्य दीक्षित ने कुवलयानन्द प्रभृति अनेक ग्रन्थ लिखे। यह दक्षिण शिवकांची का रहने वाला और महाशैव था। कुवलयानन्द अप्पयदीक्षित ने अपने संरक्षक वेङ्कटपति के कहने से लिखा था। इसने पूर्व मीमांसा में विधिरसायन, और उत्तर मीमांसा में सिद्धान्त लेशसंग्रह और परिमल लिखा है। अप्पदीक्षित का स्थिति समय विक्रमीय सप्तदश शतक द्वितीय पाद पर्यन्त है नीलकण्ठ ने अप्पदीक्षित की आयु ७२ वर्ष की लिखी है—'द्वासप्ततिं प्राप्य वयः प्रबन्धांञ्छतं व्यधादप्पय दीक्षितेन्द्रः। कुवलयानन्द चन्द्रिकाकार वैद्यनाथ का समय १७४० है। अप्पदीक्षित के विषय में हमारा यह पद्य है "मीमांसाद्वयविज्ञत्वे साहित्यागमविज्ञता। विलोकिता चेत् कस्मिंश्चित् पण्डिते ह्यप्पदीक्षिते ॥६७॥

पण्डितेन्द्रो जगन्नाथशर्मा निर्माणकौशलात्।
रसगंगाधरं कृत्वा रसगंगामवाहयत् ॥५७॥

तैलङ्ग देशीय पण्डितराज जगन्नाथ ने रसगंगाधर लिखकर साहित्य जगत् में रसगंगा बहा दी। जगन्नाथ मुगलसम्राट् अकबर

के पौत्र दिल्लीपति शाहजहाँ का सभा पण्डित था। पण्डितराज इसकी पदवी थी। यह महाकवि भी था जैसा कि लिखा भी है— "कवयति पण्डितराजे कवयन्त्यन्येऽपि विद्वांसः। नृत्यति पिनाकपाणौ नृत्यन्त्यन्येऽपि भूतवेतालाः॥ चित्रमीमांसा खण्डन की एक हस्त लिखित प्रति १६५३ ईस्वी की मिली है। रसगंगाधर इससे पहले का है। जगन्नाथका अन्तिम समय और ग्रन्थनिर्माण समय१६८५ तक माना जाता है। रसगंगाधर में सभी उदाहरण निजनिर्मित हैं। इस पर १७६५ के नागेशभट्ट का मर्म प्रकाश है। गङ्गालहरी, भामिनीविलास प्रभृति और भी कई ग्रन्थ जगन्नाथ के बनाये हुए हैं। जगन्नाथ ने अपने भामिनी विलास के अन्तिम पद्यानुसार अपनी युवावस्था दिल्ली में, और वृद्धावस्था मथुरा या काशी में व्यतीत की ॥

साहित्यकौमुदी विद्याभूषणेन विनिर्मिता ।
विश्वेश्वरेण विदुषा कृतोऽलङ्कारकौस्तुभः ॥५८॥

विद्याभूषण बलदेव ने सटीक साहित्य कौमुदी, और कूर्मांचल पर्वतीय विश्वेश्वर पण्डित ने सटीक अलंकार कौस्तुभ लिखा। १६३२ कमहाकवि कर्णपूरका भी "अलङ्कार कौस्तुभ द्रष्टव्य है। विद्याभूषण वंगदेश का रहने वाला और महाप्रभु चैतन्य का भक्त था। साहित्य कौमुदी के विषय में हमारा यह पद्य है "काव्यप्रकाशनिष्कासा एषा साहित्यकौमुदी। कैः पण्डितैर्न संवेद्या विद्याभूषणसत्कृतिः ॥६५॥ साहित्य कौमुदी में सब उदाहरण कृष्णविषयक हैं। इसका स्थिति समय विक्रमीय अष्टादशशतक पूर्वभाग है। और विश्वेश्वर का स्थिति समय १८ सौ का उत्तर भाग है। 'अलंकार कौस्तुभ, रस गंगाधर के उपमर्दन के लिए बनाया था। परन्तु वैसा नहीं बना। तथापि वह न्यायमिश्रित होने से साधारण बुद्धिवालों के लिए

उपयोगी नहीं है। ग्रन्थकार ने स्वयं लिखा है—"धियोवैधेयानां भवति विपयोऽसाव विषय इति। अलंकार कौस्तुभ के विषयमें हमारा यह पद्य है—"तर्ककर्कशतेजोभिर्विशेषेणोज्वलीकृतम् । अलंकारकौस्तुभं नः मनः प्रीणयते भृशम् ॥६९॥

साहित्यसारं विदधेऽच्युतरायमनीषिणा ।
साहित्योद्देशसंदर्भः श्रीसीतारामशास्त्रिणा ॥५९॥

दाक्षिणात्य परिडत अच्युतराय ने सटीक साहित्य सार, और मरुदेशीयभिवानी नगरवास्तव्य गौड़ परिडत श्रीसीतारामजी शास्त्री ने साहित्योद्देश ग्रन्थ लिखा। अच्युतराय मोड़क का स्थिति समय विक्रमीय १८सौका उत्तर भाग या एकोनविंशशतकका प्रथम भाग है। इसने परिडतराजके भामिनीविलासकी प्रणयप्रकाश टीकाभी लिखी है। शास्त्री जीने हिन्दी निरुक्तप्रभृति अन्य भी ग्रन्थ लिखे हैं। आप वर्तमान समय के प्रतिष्ठित विद्वानों में से हैं। काशीनिवासी म० म० रामभिश्र शास्त्री आपके गुरु थे। अच्युनराय और सीतारामजीके विषय में हमारा यह पद्य है "साहित्यसारनिर्यासे साहित्योद्देशदर्शने। अच्युतोभूर्यतत सीतारामस्ततोप्यति ॥७०॥

साहित्यशास्त्रादुद्धृत्य सारं सारं मयाधिया ।
साहित्यविन्दू रचितो बालबोधविधायकः ॥६०॥

साहित्य शास्त्र के सब ग्रन्थों का सार ग्रहण करके साम्प्रतिक छात्रोपयोगी साहित्यविन्दु ग्रन्थ मैंने लिखा। भारतके सभीसाहित्य विद्वानों ने इसकी प्रशंसा की है और इसको प्रथम कक्षा पाठ्य के लिए परमोपयोगी सिद्ध किया है। इसको देखकर काशी के साहित्यवारिधि म०म० कवि देवीप्रसाद शुक्ल ने मेरे विषय में यह पद्य द्वयलिखकर पत्र द्वारा भेजा था—"गतार्थोऽद्य जगन्नाथो विश्वनाथश्च

पण्डितः । जाते साहित्यसारज्ञे छज्जूरामकवीश्वरे ॥ "योऽभूत्पूर्वं हर्ष मिश्रोयस्ततो जयदेवकः । यश्च पश्चाज्जगन्नाथः सोऽद्य श्रीछज्जुरामकः ॥

इति श्रीछज्जूरामशतकद्वये साहित्यग्रन्थकर्तृपरिचयनामकः
तृतीयपरिच्छेदः समाप्तः ॥

अथ तत्रभवानासीत कणादो मुनिपुंगवः ।
यश्चकार जगद्भूत्यै शास्त्रं वैशेषिकं महत् ॥६१॥

महर्षि कणाद ने वैशेषिक दर्शन लिखा । कणाद, कश्यपगोत्री मैथिल ब्राह्मण थे । व्याकरणशास्त्र की तरह कणादशास्त्र भी सर्वशास्त्रोपकारक माना है । यथा "काणादं पाणिनीयं च सर्वशास्त्रो पकारकम् । श्लोक वार्तिक में कुमारिल ने, और सर्वदर्शन संग्रह में माधवाचार्य ने, नैषध में श्रीहर्ष ने, वैशेषिक दर्शन का "औलु क्यदर्शन" भी नामान्तर लिखा है । कहते हैं तपस्या करते हुए मुनि कणाद को शंकर ने उलूक का रूप धारण करके इस शास्त्र का उपदेश किया था । यह बात भाष्यकार के लेख से भी ज्ञात होती है । यथा "योगाचार विभूत्यायस्तोपयित्वा महेश्वरम् । चक्रे वैशे- षिकं शास्त्रं तस्मै कणभुजे नमः ॥ "न वयं षट्पदार्थवादिनो वैशेषिका- दिवत् ॥ इस सांख्य सूत्र के, और "महद्दीर्घवद्वा ह्रस्वपरिमण्डला- भ्याम् ॥ इस वेदान्त सूत्रके, तथा 'कर्मैके तत्र दर्शनात्" इस पू० मी० सूत्र के देखने से ज्ञात होता है कि यह दर्शनसांख्य मीमांसावेदान्त से प्राचीन है । और न्याय भाष्यकारके लेखानुसार न्यायदर्शन से भी प्राचीन है । इसमें दश अध्याय हैं ॥ इस पर साम्प्रतिक जय- नारायण की विवृति और चन्द्रकान्तका भाष्य भी द्रष्टव्य है ॥

महर्षिर्गोतमो नाम न्यायशास्त्रप्रवर्तकः।
यो न्यायदर्शनं कृत्वा उद्धाधार मनीषिणः॥६२॥

हिमालयजन्माविहार निवासी महर्षिगोतमने न्यायदर्शनलिख कर तर्कवाद का सूत्रपात किया। इसमें अनादि सिद्ध बौद्ध, जैन और जैमिनिके भी मतका खण्डन है। गोतम जीका नामऋग्वेदादि संहिताओं में तथा उपनिषदों में आया है। आप महर्षि अंगिरा के प्रपौत्र थे। अहल्या आपकी धर्मपत्नी और पुत्र शतानन्द था। आपका निश्चित स्थिति समय त्रेतायुग है। महाभारत के शान्तिपर्व में व्यासजी ने लिखा है—"न्यायतन्त्राण्यनेकानि तैस्तैरुक्तानि यद्यपि। न्यायतन्त्रं हि कात्स्न्र्येन गोतमो वेद तत्त्वतः॥ वैदिक दर्शनों में न्याय-दर्शनका स्थान सर्वोच्च है। श्रुतिमें भी "आत्मावारे श्रोतव्यो मन्तव्यः" यहां मन्तव्यपद से न्यायशास्त्रका ही ग्रहण है। यहबात न्यायकुसुमाञ्जलिमें उदयनाचार्य ने स्पष्ट की है—"न्यायचर्चेयमीशस्यमनन व्यपदेशभाक्। उपासनैव क्रियते श्रवणानन्तरागता॥ मनु और याज्ञवल्क्य ने भी—"यस्तर्केणानुसंधत्ते स धर्मं वेद नेतरः" और पुराण न्याय-मीमांसा,कहकर न्यायशास्त्रकी धर्मोपयोगिता प्रदर्शितकी है। न्याय दर्शन में पाँच अध्याय हैं। इसमें वर्णित षोडश पदार्थोंके ज्ञानसे मनुष्यका मोक्ष हो जाता है। यथा "पदार्थतत्त्वविज्ञाता यत्र कुत्राश्रमे वसन्। जटी मुण्डी शिखी वापि मुच्यते नात्र संशयः॥ महर्षि कणाद और गोतम की प्रशंसा में हमारे दो पद्य हैं—"महर्षिर्गोतमो धन्यः कणादश्च महामुनिः। तर्केणैव कृतो याभ्यां मोक्षमार्गस्य निर्णयः॥७१॥ ब्राह्मणास्ते कणादाद्या ब्राह्मणा वयमप्यमी। पर्वते परमाणौ च पदार्थत्वं प्रतिष्ठितम्॥७२॥

यथा प्रशस्तपादेन भाष्यं वैशेषिके कृतम्।
तथा वात्स्यायनेनापि न्याये भाष्यमरच्यत॥६३॥

महर्षि प्रशस्तपादने वैशेषिक सूत्रभाष्य, और मगधनिवासीवात्स्यायन ने न्यायभाष्य लिखा। प्रशस्तपाद तथाअक्षपाद नामभी महर्षि-गोतमके ही हैं। अतः संग्रहनामक प्रशस्तपादभाष्य, गोतमजी का ही लिखा मानना चाहिये। जिस प्रकार कणाद ने पदार्थ तत्त्व ज्ञान से मोक्ष, परमाणुवाद और गजदुत्पत्तिमें ईश्वर को निमित्त कारण माना है, इसी प्रकार गोतम ने, अत एव न्यायऔर वैशेषिक दोनों समान तन्त्र हैं। यद्यपि कणादने सप्त, औरगोतमने षोडश पदार्थ माने हैं। परन्तु वास्तवमें षोडश सातके ही भीतर आ जाते हैं। न्यायभाष्यकार के अन्यनाम-विष्णुगुप्त, चाणक्य, पक्षिल, और कौटिल्यभी हैं। कामशास्त्र और कौटिल्यार्थशास्त्रके निर्माताभी वात्स्यायन हैं। ये मौर्यचन्द्रगुप्तकेप्रधान मंत्री तथा गुरु थे। इनका स्थिति समय स्कन्दपुराण के अनुसार विक्रम से आठ सो वर्ष पूर्व आता है। और मेगास्थिनीज के अनुसार ३२२ वर्ष पूर्व है। इन्होंने पाणिनि के कई सूत्र न्यायभाष्य में उद्धृत किये हैं। वात्स्यायन की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"मुनिर्वात्स्यायनो धन्यो यस्यापूर्वैव दृश्यते। न्यायशास्त्रे चार्थशास्त्रे कामशास्त्रे प्रगल्भता ॥७३॥

उद्योतकर आचार्यो न्यायवार्तिकमातनोत् ।
न्यायवार्तिकतात्पर्यं मिश्रवाचस्पतिस्तथा ॥६४॥

उद्योतकराचार्य ने न्यायभाष्यपर वार्तिकग्रन्थ बनाया। और मिश्र वाचस्पति ने न्यायवार्तिक की टीका तात्पर्य। उद्योतकर उत्तर देशीय भारद्वाज गोत्री गौड़ ब्राह्मण था। जैसा कि उसने स्वयं लिखा है "यदक्षपादप्रतिभो भाष्यं वात्स्यायनो जगौ। अकारि महतस्तस्य भारद्वाजेन वार्तिकम् ॥ न्यायवार्तिक में बौद्ध पण्डित दिङ्नाग का "प्रमाणसमुच्चय"ग्रन्थ खण्डित किया गया है जैसा कि इस विषय में हमारा यह पद्य है "दिङ्नागनास्तिकवचस्तमसोनाशहेतवे। उद्योतकर-

मिश्रेण वार्तिकोद्योत आश्रितः ॥७३॥ सुबन्धु कवि ने अपने समय में न्यायशास्त्र रक्षक उद्योतकर को ही माना है । यथा "न्यायस्थिति-मिवोद्योतकरस्वरूपाम्" बौद्धसंगतिमिव अलंकार भूषितां, उद्योतकर और धर्मकीर्ति का स्थिति समय विक्रमीय षष्टशतकोत्तरभाग या सप्तम-शतक पूर्वभाग तक है । सर्वतन्त्रज्ञ वाचस्पति मिश्र मैथिल ब्राह्मण था । वह "न्यायसूचीनिवन्धोयमकारि सुधियां मुदे । श्रीवाचस्पति-मिश्रेण वस्वङ्कवसुवत्सरे ॥ इस अपने पद्य के अनुसार ८९८ विक्र-माब्द में जीवित था । न्यायमञ्जरीकार जयन्त भट्ट, वाचस्पति का मित्र था । भामती, सांख्यतत्त्वकौमुदी, योगवाचस्पत्य, तत्त्वविन्दु, तत्व समीक्षा, न्याय कणिका, का निर्माता भी यही वाचस्पति था । यह बात भामती के अन्तमें इसनेस्पष्ट लिखी है । काव्य प्रकाश की टीका, और खण्डनोद्धार कर्ता-वाचस्पति, इससे वहुत पीछेका है ॥

तात्पर्यपरिशुद्धिं च भाष्ये च किरणावलीम् ।
आचार्योदयनश्चक्रे विवेकं कुसुमाञ्जलिम् ॥६५॥

महाशैव मैथिल पण्डित उदयनाचार्य ने तात्पर्यपरिशुद्धि, प्रश-स्तपादभाष्य की टीका किरणावली, आत्मतत्त्वविवेक, और न्याय-कुसुमाञ्जलि प्रभृति अनेक ग्रन्थ वनाये । इसने अपना स्थितिकाल अपने सर्वप्रथम ग्रन्थ लक्षणावली में स्वयं लिखा है—"तर्काम्बराङ्क प्रमितेष्वतीतेषु शकान्ततः । वर्षेषूदयनश्चक्रे सुबोधां लक्षणावलीम् ॥ किरणावली तथा न्यायकुसुमाञ्जलि की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है–"कोनप्रसीदति जनो विलोक्य किरणावलीम् । कुसुमाञ्जलिमाघ्राय कस्य चेतो न तृप्यति ॥७४॥ उदयनाचार्य ने कुसुमाञ्जलि के पांच स्तवकों में अनीश्वरवादि चार्वाक, जैन, बौद्धसांख्य, मीमांसकों का खण्डन किया है, जैसा कि उदयनाचार्य की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है–"येनोत्पाट्यानीश्वरस्यमूलं स्थापित ईश्वरः । तस्योदयनवीरस्यकः

स्तुतिं न करिष्यति ॥७५॥ उदयन एक समय जगन्नाथपुरी में गये, वहाँ मन्दिर के कपाट बन्द पाये दर्शन नहीं हुए। तब ये ललकार कर जगन्नाथजी को बोले—"ऐश्वर्यमदमत्तोऽसि मामवज्ञाय वर्तसे। उपस्थितेषु बौद्धेषु मदधीना तवस्थितिः॥ कहते हैं कि कपाट स्वयं खुल गये। पूर्वोक्त पद्यानुसार उदयन का समय १०४१ विक्रमाब्द होता है। परन्तु यह उनकी सर्व प्रथम रचना होने से उनका स्थिति समय ११२० तक माना जाता है कुसुमाञ्जलि पर १७ सौ के हरिदास भट्टाचार्य की हरि दासी टीका सम्प्रति पठन पाठन में अति प्रचलित है।

टीकां प्रशस्तभाष्यस्य कन्दलीं श्रीधरोऽकरोत् ।
न्यायलीलावतीग्रन्थमाचार्यो वल्लभस्तथा ॥६६॥

भट्ट श्रीधर ने न्यायकंदली, और वल्लभाचार्य ने न्यायलीलावती वनाई। श्रीधर पण्डित दक्षिण राढापुरी का रहने वाला था। इसने "अधिकदशोत्तरनवशत"(९१३)शाकाब्दे न्यायकन्दली रचिता, इस अपने पद्य के अनुसार (१०४८) विक्रमाब्द में न्यायकन्दली लिखी। मैथिल वल्लभाचार्य,कन्दलीकारसे कुछ पीछे का है क्योंकि वल्लभाचार्य ने कन्दलीकार का स्मरण किया है। यह वल्लभाचार्य, संभवतः सप्तशतीकारगोवर्द्धनाचार्य का भ्राता वलभद्राचार्य था। जैसा कि गोवर्धनाचार्य ने सप्तशती में लिखा है—"उदयनबलभद्राभ्यां सप्तशतीशिष्य सोदराभ्यां मे। द्यौरिव रविचन्द्राभ्यां प्रकाशिता निर्मलीकृत्य॥ यह उदयन पूर्वोक्त उदयनाचार्य नहीं होगा क्योंकि गोवर्धनके आश्रयदाता लक्ष्मणसेन का समय १२१७ निश्चित है। न्यायकंदली और न्यायलीलावती की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है— "कन्दली श्रीधरस्येयं तार्किकानन्दकन्दली। न्यायलीलावती कस्य वल्लभस्य न वल्लभा॥ ७६॥

महोपाध्यायगङ्गेशो न्यायग्रन्थशिरोमणिम्।
न्यायचिन्तामणिं चक्रे परिष्कारपरिष्कृतम् ॥६७॥

नव्यन्यायावतार मैथिल पण्डित गङ्गेश ने न्याय और वैशेषिक दर्शन का सार ग्रहण करके न्याय चिन्तामणि ग्रन्थ बनाया। गङ्गेश मीमांसाके भी प्रकाण्ड विद्वान् थे। जैसा कि उनके पुत्र वर्धमान ने लिखा है—"न्यायाम्भोजपतङ्गाय मीमांसापारदर्शिने। गंगेश्वराख्यगुरवे पित्रेऽत्र भवतेनमः॥ खाद्य खण्डनमें श्रीहर्ष ने चिन्तामणि की बड़ी प्रशंसाकी है। गङ्गेशोपाध्याय का स्थिति समय विक्रमीय द्वादश शतक है इसके विषय में हमारा यह पद्य है—"गंगेशेनोद्धृता वाणी कणादी गौतमी तथा। बौद्धवागन्धकूपेषु पतिता मणिभासया ॥७८॥

तत्पुत्रवर्धमानेन द्वौ प्रकाशौ प्रकाशितौ।
एकस्तु किरणावल्या द्वितीयः कुसुमाञ्जलेः॥६८॥

गंगेश के पुत्र वर्धमान ने तात्पर्यपरिशुद्धि किरणावली कुसुमाञ्जलि न्याय लीलावतीकी टीकायें लिखीं। यह बड़ा भारी नैयायिक था। किरणावली पर १६ सौ के पद्मनाभ की भी टीका है। "उपदिष्टा गुरुचरणैरस्पृष्टावर्धमानेन। किरणावल्यामर्थास्तन्यन्तेपद्मनाभेन॥

तत्त्वचिन्तामणेर्व्याख्यालोकं पक्षधरोऽकरोत्।
दीधितिं च महाविद्वान् रघुनाथ शिरोमणिः ॥६९॥

न्याय चिन्तामणि की टीका जयदेव नामक पक्षधर मिश्र ने 'आलोक' और रघुनाथ शिरोमणि ने 'दीधिति' बनाई। चन्द्रालोक और प्रसन्नराघव का कर्ता भी यही पक्षधर था। उस के शिष्य भगीरथ ने स्पष्ट लिखा है—"विंशाब्देजयदेवपण्डित कवितर्काब्धि पारंगतः" जयदेव हरिमिश्र का शिष्य औरविदर्भ देशके कुण्ड-

नपुर का रहने वाला था। आलोक के आरम्भ में इसने लिखा है। "अधीत्यजयदेवेन हरिमिश्रात् पितृव्यतः। तत्त्वचिन्तामणेरित्थमालोकोऽयं प्रकाश्यते ॥ इसकी प्रशंसामें यह पद्यांश प्रसिद्ध है "पक्षधरप्रतिपक्षीह लक्ष्यीभूतो न दृश्यते॥ पक्षधर का समय विक्रमीय चतुर्दश शतक पूर्व भाग है। इसके शिष्य रुचिदत्त और भगीरथने भी न्यायके कई ग्रन्थ लिखे हैं। चिन्तामणि परिस्कार कर्ता वासुदेव सार्वभौमका शिष्य और महाप्रभु चैतन्यका सतीर्थ्य रघुनाथ तार्किक शिरोमणि नवद्वीप (नदियापुर)का रहने वाला था। इसने अपनी दीधिति के विषयमें यहलिखा है—"सर्वो न्यायमधीते कुरुते कुतुकान्निवन्धमप्यत्र। अस्य तु किमपि रहस्यं के चिद्विज्ञातुमीशते सुधियः॥ रघुनाथका स्थिति समय "शाकेचतुर्दशशतेरविवाजियुक्ते, गौरोहरिर्धरणिमण्डल आविरासीत्" इस १५४२ के अनुसार षोडशशतक उत्तर भाग है रघुनाथ ने आत्म-तत्त्वविवेक की भी दीधिति टीका लिखी है॥

माथुरीं मथुरानाथस्तर्कवागीश आतनोत् ।
जगदीशो जागदीशीं तर्कालंकार संज्ञकः ॥७०॥

रघुनाथ के शिष्य मथुरानाथ ने, चिन्तामणि की रहस्य टीका और काशीनिवासि शब्दार्थमञ्जरीकार भवानन्द के शिष्य जग-दीश भट्टाचार्यने जागदीशी टीका लिखी। ये दोनों वंगाली पण्डित थे। मथुरानाथ अति वृद्धावस्थामें भी न्याय का पठन पाठन स्तोत्र वत् किया करते थे। यह देखकर एक दिन एक संन्यासी बोला— "तर्ककर्कशविचार चातुरी कातुरी ययवयसा विभाव्यते। आतुरी भवति यत्रमानसम्—मथुरानाथ ने उत्तर दिया—"धातुरीप्सितमपाकरोति कः॥ कणाद रहस्य और कणाद सूत्रोपस्कारकर्ता-मैथिलशंकर मिश्र मथुरानाथ केशिष्य दीधिति व्याख्याकार कणाद नामक रघुदेव का शिष्य था। मथुरानाथ तथा जगदीश का स्थिति समय सप्त-

दशशतक मध्य भागतक है। जगदीशने शब्द शक्ति प्रकाशिका भी लिखी है। सुनते हैं कि जगदीश अत्यन्त निर्धन थे। माथुरी तथा जागदीशी के कई प्रकरणों पर जीन्दप्रान्तवर्ति-शिरसाखेड़ी ग्राम निवासी वेदपाठी म०म०पं० प्रभुदत्तजीकेपुत्र काशीनिवासी वेदाचार्य विद्याधरजी के भ्राता वर्तमान गौड़ पं० शिवदत्ताजी न्यायाचार्य की टीका है। इन दोनों की प्रशंसामें हमारा यह पद्य है-"धन्यः स मथुरानाथोजगदीशश्च पण्डितः। मणेश्चतुर्षु खण्डेषु ययोराभाति भारती ॥७९॥

भट्टाचार्यचक्रवर्ती करोतिस्म गदाधरः।
गदाधरीं शक्तिवादं व्युत्पत्तिवादमेव च ॥७१॥

गदाधर भट्टाचार्य ने दीधिति की टीका का गादाधारी और व्युत्पत्तिवाद शक्तिवाद आदि अनेक ग्रन्थ बनाये। यह रत्नकोषकार हरिरामतर्कालंकार का शिष्य तथा बंगाल का ही रहने वाला था। रत्नकोश का मत मुक्तावलीकार ने खण्डित किया है। इसके विषय में दिल्लीस्थ म० म० हरनारायणशास्त्री का यह पद्य है—"यो गोतनीयं भुवि षोडशात्मकं वादैश्चतुःषष्टिमितैश्चतुर्गुणम्। चकार तं तार्किकचक्रवर्तिनं गदाधरं गण्यगुणं न वेत्तिकः। गदाधर के सभी ग्रन्थों की विद्वत्समाज में आज बड़ी प्रतिष्ठा है। गदाधर का स्थिति समय विक्रमीय सप्तदशशतक तृतीय पादपर्यन्त है। गदाधर की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"गदाधरं वर्जयित्वा कस्मिंश्चिदपि पण्डिते। एतादृक् तर्कपाण्डित्यं नासीदस्ति भविष्यति ॥८०॥

न्यायपञ्चाननः श्रीमान् विश्वनाथमहोदयः।
न्यायमुक्तावलीं न्यायसूत्रवृत्तिं च निर्ममे ॥७२॥

वंगदेशीयन्यायपञ्चानन विश्वनाथ भट्टाचार्य ने न्यायचिन्तामणिका सार लेकर न्यायसिद्धान्तमुक्तावली और न्यायसूत्रोंकी वृत्ति बनाई।

न्यायसूत्र वृत्तिइसने–"रसवाणतिथौ शकेन्द्रकाले बहुले कामतिथौ शुचौ सिताहे । अकरोन्मुनिसूत्रवृत्तिमेतां ननु वृन्दाविपिने स विश्वनाथः"॥ इस अपने पद्यके अनुसार १६९१ में वृन्दावन में लिखीं । यद्यपि यह पद्य सब वृत्तियोंमें नहीं है किन्तु हस्तलिखित प्रतिमें मिला है। विश्वनाथ वंगदेशीय विद्यानिवास भट्टाचार्य का पुत्र तथा रुद्र भट्टाचार्यका बड़ा भाई था। मुक्तावली के विषयमें हमारा यह पद्य है— "न्यायग्रन्थसहस्राणां सर्वेषां न्यायशास्त्रिणाम् । तात्पर्यं यत्र सोऽर्थोऽत्र विश्वनाथेन भाषितः ॥८१॥

अन्नंभट्टोरचितवान् तर्कसंग्रहमुत्तमम् ।
तट्टीकां दीपिकां चैव बालव्युत्पत्तिहेतवे ॥ ७३ ॥

आन्ध्रदेशीय अन्नंभट्ट पण्डितने तर्क संग्रह, और उसकी टीका दीपिका लिखी। अन्नंभट्टके विषयमें यह पद्य प्रसिद्ध है–"काशीगमनमात्रेण नान्नंभट्टायतेद्विजः । अपिगङ्गाजलस्नानान्नाधः केशः कुशायते ॥ पाणिनीय सूत्रवृत्ति-मिताक्षराकार अन्नंभट्ट भी यही है। इसके ज्येष्ठ भ्राता रामकृष्णभट्टने कौमुदीकी रत्नाकर टीका लिखी है । भट्टोजीका पुत्र भानुजी दीक्षित इसका मित्र था। इसका स्थिति समय-सप्तदशशतक उत्तर भाग निश्चित है। १६ सौके केशवमिश्र प्रणीत तर्कभाषाकी टीका भी इसने लिखी है। तर्कसंग्रहके विषयमें हमारा यहपद्य है–"यथान्नं प्राणिनां प्राणो लोके वेदे च मन्यते । तथातर्केच्छुबालानामन्नंभट्टकृतिर्भुवि ॥ ८२ ॥

मुक्तावल्या दिनकरीव्याख्यां दिनकरोऽकरोत ।
तट्टीकारामरुद्रेण रामरुद्री विनिर्मिता ॥ ७४ ॥

काशी निवासी दिनकर भट्ट ने मुक्तावली की दिनकरी और वंगदेशीय रामरुद्र ने उसकी टीका रामरुद्री लिखी। इसी भारद्वाज

महादेव तार्किक के पुत्र दिवाकर नामक दिनकरने-"पूर्णाब्धिसप्तैक-मिते प्रवर्षे" इस अपने पद्य के अनुसार १७४० विक्रमाब्द में वृत्तरत्नाकरकी आदर्शटीका लिखी थीं। इसी के लगभग दिनकरी का निर्माण समय है। भट्ट रामरुद्र, दार्शनिकभट्ट रामेश्वरका पुत्र था। जिसके विषय में कविवर हरिहर ने यह पद्य दिया है-"हृद्याः सन्तु-शतं विद्याः काव्यादव्याहतं यशः। निपीतदर्शनग्रामे देहि रामेश्वरेद्रु-शम् ॥" रामरुद्र का स्थिति समय अष्टादशशतक का उत्तरभाग है। रामरुद्री की पूर्ति काशीस्थ पं० राजेश्वरशास्त्रि द्रविड़ ने की है दिनकरी और रामरुद्री के विषय में हमारा यह पद्य है— "मुक्तावल्या दिनकर प्रकाशोहि प्रकाशकृत् । तच्चमत्कारसारन्तु रामरुद्र्यां विलोक्यते ॥ ८३ ॥

चक्रे सुदर्शनाचार्यो व्युत्पत्तिशक्तिवादयोः ।
वात्स्यायनीयभाष्यस्य टीकाः छात्रोपकारिकाः॥७५॥

पंचनदीय पण्डित सुदर्शनाचार्यशास्त्री ने व्युत्पत्तिवाद शक्तिवाद तथा न्यायभाष्यकी छात्रोपयोगी टीकायें लिखीं। सुदर्शनाचार्य, काशी-निवासी न्यायमार्तण्डसीतारामशास्त्री तथा म० म० गंगाधरशास्त्रीका शिष्य था। १९८१ विक्रमाब्दमें काशी में इसका स्वर्गवास हुआ। व्युत्पत्तिवाद पर साम्प्रतिक मैथिल पं० बच्चा झा, तथा तच्छिष्य लक्ष्मीनाथ झा की, और शक्तिवाद पर वंगदेशीय गोलोकनाथ भट्टाचार्यके पुत्र हरिनाथ की, तथा वर्तमानकाशीस्थ गोस्वामीदामोदरशास्त्री की, और न्यायभाष्य पर रघूत्तम तथा वर्तमान मैथिल पं० गङ्गानाथ झा की टीका भी द्रष्टव्य है। सुदर्शनाचार्य के विषय में हमारा यह पद्य है-"धन्यः सुदर्शनाचार्यो दर्शनाद्यस्य सत्कृतेः। काठिन्यंन्यायभाष्यादेदूरीभवतितत्क्षणम् ॥ ८४ ॥

न्यायमुक्तावलीटीका यथा मे मूलचन्द्रिका ।
तथैवन्यायसूत्राणां वृत्तिश्चापि ममास्ति हि ॥७६॥

आजकल के अल्पश्रमी विद्यार्थियों के लिए दिनकरी टीका बहुत कठिन जानकर-मुक्तावली की सरल टीका मूलचन्द्रिका, और न्यायदर्शन की सरलवृत्ति मैंने लिखी । मुक्तावली पर हमारी मूल चन्द्रिकानुसारिणी वर्तमान पं० नृसिंहदेव शास्त्री की टीका भी द्रष्टव्य है । नव्यन्याय प्राचीनन्याय की रक्षा के लिए बनाया गया था। परन्तु दुःख है कि वह रक्षक न रह कर भक्षक हो गया, क्योंकि न्यायदर्शन का पठन पाठन अब उठ सा गया है । जैसा कि इस विषय में हमारा यह पद्य है–' गतंसूत्र-तत्त्वं गतं भाष्य तत्त्वं गतं वार्तिकस्याखिलं तत्त्वमद्य । इदानींतनानां जनानां प्रवृत्तिर्नवीनप्रबन्धेषु जागर्तिनित्यम् ॥ ८५ ॥

इति श्रीछज्जूरामशतकद्वये न्यायवैशेषिक ग्रन्थकर्तृपरिचयनामकः
चतुर्थ परिच्छेदः समाप्तः ॥

यानि प्रणीतवान् सांख्यसूत्राणि कपिलो मुनिः ।
तेषां विज्ञानभिक्षुर्वै भाष्यं प्रवचनं व्यधात् ॥७७॥

गंगासागर सङ्गम निवासी-महर्षि कपिल ने सांख्यसूत्र लिखे । उनपर काशीनिवासी-विज्ञानभिक्षु ने सांख्य प्रवचनभाष्य बनाया । महर्षि कपिल तथा विज्ञान भिक्षु के विषय में हमारे ये पद्य हैं–"कपिलं ह्यादिविद्वांसं के प्रशंसन्ति नो बुधाः । येनाविद्योदधौमग्नं सांख्यनावोद्धृतं जगत् ॥८६॥ "सर्वार्थस्य प्रकाशेनशास्त्रयोः सांख्ययोगयोः । विज्ञानभिक्षोर्विज्ञानं केननैव प्रशस्यते ॥ ८७ ॥ विज्ञानभिक्षु का स्थिति समय षोडशशतक उत्तर भाग है । सांख्यसूत्र अब दो तरह के उपलब्ध हैं । एक-तत्त्वसमास, दूसरा-षडध्यायि । पहला अतिप्राचीन है । और

दूसरा न्यायवैशेषिक के वाद का बना हुआ है। संभवतः षडध्यायि कपिल के नाम से इनकी शिष्यपरंपरा में से किसी ने बनाया होगा। कुछ विद्वान् कहते हैं कि 'षडध्यायि सांख्य दर्शन' विज्ञान भिक्षु ने बनाया है क्योंकि शंकराचार्य, वाचस्पति, माधवाचार्यादि ने इसका एक भी सूत्र उद्धृत नहीं किया। परन्तु यह उनका भ्रम है। क्योंकि विज्ञान भिक्षु ने सूत्रों के पाठान्तर भी दिये हैं। वेदों में भी सांख्य तथा योग का वर्णन है। जैसे—"सांख्ययोगादिगम्यम्" (श्वेता०) "सत्वं-रजस्तमइति" (जावा०) "अष्टौप्रकृतयः षोडशविकाराः" (गर्भो०) सांख्यमत में पच्चीस तत्त्वों के ज्ञान से मोक्ष हो जाता है। जैसे कि गौड पादभाष्य में लिखा है "पञ्चविंशति तत्वज्ञोयत्र कुत्राश्रमेवसन्। जटी मुण्डी शिखी वापि मुच्यते नात्र संशयः॥ सांख्य शास्त्रका ज्ञान और योग का वल सर्वोच्च है यथा—"नास्ति सांख्यसमं ज्ञानं नास्ति योगसमं वलम्॥ सांख्य दर्शन में मुक्ति के लिये ईश्वर को नहीं माना तथापि मुक्तात्माओं ने ईश्वर की स्तुति की है।

श्रीमदीश्वरकृष्णेन याः कृताः सांख्यकारिकाः।
गौड़पादमाठराभ्यां तासां भाष्यमरच्यत ॥७८॥

आर्यावर्तदेशीय आचार्य ईश्वर कृष्ण ने सांख्यकारिका, और गौड़पाद परमेश्वराचार्य, तथा माठराचार्य ने उन पर भाष्य लिखा। ईश्वर कृष्ण कपिल की शिष्य परम्परा में थे। इनका स्थिति समय अवचतुर्थ शतक माना जाता है। पर वास्तव में अनिश्चित है। गौड़ पादाचार्य, गौड़देश कुरुक्षेत्र प्रान्त के रहने वाले, और शंकराचार्य के परम गुरु थे। अद्वैतवाद के ये सर्व प्रथम आचार्य थे। इनका स्थिति समय ८६० तक माना जाता है। इनकी माण्डूक्य कारिका भी द्रष्टव्य है माठर—वाचस्पति से पूर्व थे। कुछ विद्वान् गौड़पाद से भी पूर्व मानते हैं। इन तीनों के विषय में हमारा यह पद्य है—

"मुनेरीश्वर कृष्णस्य प्रमाणं कारिकाः परम् । चक्रतु र्यत्रभाष्यंवै गौड़-पादश्च माठरः ॥८८॥

सर्वतन्त्रविदा वाचस्पतिना सांख्यकौमुदी ।
श्रीनारायणतीर्थेन विहिता सांख्यचन्द्रिका ॥७९॥

वाचस्पति मिश्र ने कारिकाओं की 'सांख्यतत्त्वकौमुदी' टीका बनाई। और नारायण तीर्थ ने सांख्य चन्द्रिका। कौमुदी का निर्माण समय ८८६ और चन्द्रिका का १७५८ के लगभग है। सांख्यतत्त्व कौमुदी पर—काशिक पं० वंशीधर की, तथा हरिद्वार निवासि साम्प्रतिक साधु बालरामोदासीन की टीका दर्शनार्ह है। कौमुदी के विषय में हमारा यह पद्य है—"मनांसि कुमुदानीव बोधयन् सांख्यशास्त्रिणाम् । वाचस्पति प्रबन्धोऽयं चन्द्रमा इव दीप्यते ॥८९॥

भावागणेशो व्यदधात्सांख्यतत्त्वप्रदीपनम् ।
क्षेमानन्देनविहितं सांख्यतत्त्वविवेचनम् ॥८०॥

काशीनिवासी दाक्षिणात्य भावागणेश ने तत्त्वदीपन, और मध्यदेशीय क्षेमानन्द ने सांख्यतत्त्व विवेचन लिखा। भावागणेश—विज्ञानभिक्षु का शिष्य था। इसने योगसूत्र वृत्ति भी लिखी है। इसका स्थिति समय १६४० तक है। और क्षेमानन्द का १७९५ है। इन दोनों की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है क्षेमानन्दो विमलधीः सांख्यतत्त्वविवेचने । भावागणेशमिश्रस्तु तस्मादप्यधिकः सुधीः ॥९०॥

यो योगः प्रतिभातिस्म भगवन्तं पतञ्जलिम् ।
तस्यैव भगवान् व्यासो भाष्यजातमवर्तयत् ॥८१॥

योगशास्त्र, उत्तराखण्डवासि महर्षि पतञ्जलि ने बनाया। और महर्षि वेदव्यास ने उसका योग भाष्य लिखा। योग सूत्र के विषय में

हमारा यह पद्य है "योगसूत्राशयं योगेश्वरः कृष्णोऽथ योगिनः। पतञ्जलिर्वाव्यासोवाविदुर्नान्ये तु पण्डिताः ॥९१॥ योगसूत्रनिर्मातापतञ्जलि० महाभाष्यकार पतञ्जलि से बहुत प्राचीन हैं। "योगेन चित्तस्य पदेन वाचाम्" इस पद्य लेखक को संभवतः नामैक्य से भ्रम हुआ है। अतएव—"एतेन योगः प्रत्युक्तः" इस ब्रह्मसूत्र में सूत्र वृत्ति भाष्य के अनुसार पातञ्जल योग दर्शन का ही खण्डन किया गया है। व्यास के कथनानुसार माहेश्वर (शिवप्रणीत) भी कोई योगशास्त्र पहले था। योगदर्शन में चार पाद हैं। यमनियमादि से अतिचंचल चित्त का वश में करना योग का लक्षण है यथा योगश्चित्त वृत्तिनिरोधः' अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः' 'ईश्वर प्रणिधा नाद्वा' योगाभ्यास से परमात्मा का साक्षात्कार करना परम धर्म है। जैसा कि लिखा भी है—"अयन्तु परमोधर्मो यद्योगेनात्मदर्शनम् ॥ योगी और परमात्मा का भेदाघटितत्व प्रकार यह है—'-यथाग्निरग्नौ संक्षिप्तः समानत्वमनुव्रजेत्। तथात्मा साम्यमभ्येति योगिनः परमात्मना ॥ सांख्य और योग दोनों समान तन्त्र हैं, जैसा कि भगवद्गीता में लिखा है—"सांख्ययोगौ पृथग्वालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः। ब्रह्म सूत्र निर्माता व्यास जी ही इस भाष्य के निर्माता हैं इसमें कोई सन्देह नहीं। यद्यपि भगवान् व्यास अजरामर हैं तथापि उनका लोक में स्थिति समय जनमेजय तक है। जो विक्रम से लगभग २६ सौ वर्ष पूर्व है। कह्लणकी राजतरंगिणी के मत से ६५३ कलि वर्ष बीतने तक कुरु पाण्डव थे। इससे जनमेजय का स्थिति समय विक्रम से लगभग २३ सौ वर्ष पूर्व हो सकता है। परन्तु कुछ समय हुए कल्हणसे भी नौ सौ वर्ष पूर्व की राजतरंगिणी पुस्तक मिली है, उसमें जनमेजयके कनिष्ठ भ्राता हिरण्यदेवकेपुत्र तथा उत्तराधिकारी रामदेव का निश्चित राज्य समय कलि संवत् १३२ से २०१ तक दिया है ॥

वाचस्पतिर्भाष्यटीकां भोजो वृत्तिमकल्पयत्।

विज्ञानभिक्षुरेवं च योगवार्तिकमातनोत् ॥८२॥

वाचस्पति मिश्र ने भाष्यकी टीका योगवाचस्पत्य, सर्वज्ञ राजा भोज ने योग सूत्रों की भोज वृत्ति, और सांख्यसार तथा योग सार संग्रह कर्ता विज्ञान भिक्षु ने भाष्य का विस्तृत व्याख्यान योगवार्तिक लिखा। वाचस्पति का निश्चित समय "वस्वङ्कवसुवत्सर" पहले कह आये हैं। भोजराजाका निश्चित समय एकादशशतकउत्तर भाग और विज्ञान भिक्षु का षोडशशतक उत्तर भाग है। वाचस्पति मिश्र और भोजराज के विषय में हमारा यह पद्य है—"भाष्यसूत्रार्थनिष्णातधियोर्मिश्रमहीभृतोः। कंनरञ्जयते धीरं व्याख्यानद्वयमद्वयम् ॥९२॥

योगचिन्तामणिः चक्रे शिवानन्देनयोगिना ।
रामानन्देन च तथा योगसूत्रमणिप्रभा ॥८३॥

अप्पदीक्षित के शिष्य शिवानन्द ने योगचिन्तामणि, और शाङ्कर भाष्य टीका रत्नप्रभाकार गोविन्दानन्द के शिष्य रामानन्द ने मणिप्रभा वृत्ति लिखी। इन दोनों महात्माओं का स्थिति समय विक्रमीय सप्तदश शतक है। योग सूत्रों पर साम्प्रतिक दाक्षिणात्य सदाशिवेन्द्र सरस्वती का 'योगसुधाकर' और १७५८ के काशीस्थ श्रीनारायण तीर्थ की योगसिद्धान्त चन्द्रिका भी द्रष्टव्य हैं। शिवानन्द तथा रामानन्दजी की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"रामानन्दशिवानन्दौ योगतत्त्वविशारदौ। स्वं स्वं मणिं दर्शयित्वा कं न रञ्जयतोनरम् ॥९३॥

इति श्रीछज्जूरामशतकद्वये सांख्ययोगग्रन्थकर्तृपरिचयनामकः पञ्चमपरिच्छेदः समाप्तः ॥

कर्मकाण्डप्रचाराय व्यासशिष्यशिरोमणिः ।
कृतवान् पूर्वमीमांसादर्शनं जैमिनिर्मुनि ॥८४॥

जैमिनिनेवैदिक कर्मकाण्डके प्रचारार्थ पूर्वमीमांसा लिखी। इस में बारह अध्याय हैं। वेदविहित यज्ञादि कर्मों का जानना या करना ही इस शास्त्र में परम धर्म माना है। जैसा कि लिखा भी है-"यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्" तथा—"यं यं क्रतु-मधीतेऽसौ कुरुतेवा यथाश्रु तम्। त्रिर्वित्तपूर्णपृथिवी दानस्य फलमश्नुते॥ पूर्वमीमांसा तथा उत्तरमीमांसा का वेद वाणी से घनिष्ठ सम्बन्ध है जैसा कि इन दोनों के विषय में हमारा यह पद्य है—"धन्यौ तौ जैमिनिव्यासौ पापतापहरे ययोः। कर्मकाण्डज्ञानकाण्डे वेदवाचादृढी कृते॥ ९४॥ धर्म का लक्षण इसमें—"चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः" "वेद विहितकर्मजन्योधर्मः" ॥ यह किया है। उदाहरण जैसे-'सत्यंवद" धर्मं चर" 'स्वाध्यायोऽध्येतव्यः॥ अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयीततमध्यापयीत अहरहः संध्यामुपासीत। स्वर्गकामो यजेत,, इत्यादि हैं। जैमिनि का स्थिति समय भगवान् व्यास के ही लगभग है। जिसकी चरमावधि कलिका प्रथम या द्वितीय शतक है। ये व्यास जी के प्रधान शिष्य थे। इनकी जन्मभूमि पवित्र कुरुक्षेत्र प्रान्त या उत्तराखण्ड प्रतीत होती है॥

तद्भाष्यं शवरस्वामी चक्रे शावरमद्भुतम्।
चतुर्वेदार्थचातुरः सूत्रगूढ़ार्थसंविदे ॥८५॥

दक्षिणदेशीय भट्ट दीप्तस्वामि के पुत्र शवर स्वामि ने 'मीमांसा दर्शन, पर शावर भाष्य लिखा। इनसे पूर्व, पूर्व तथा उत्तर मीमांसा पर नन्दराज्यकालिकपाणिनिके गुरुवर्ष के सहोदर उपवर्ष पण्डित की वृत्ति थी। शवरस्वामी ने राजा हर्षदेव कृत लिङ्गानु-शासन कोश की व्याख्या भी लिखी है। स्वामि शंकराचार्य ने अपने भाष्य में शवरस्वामि का नाम लिखा है। अतः इनका स्थिति समय अष्टमशतक है। इनके विषय में हमारा यह पद्य है—"वेदविद्या

विदारपस्य मीमांसापारदृश्वनः । शवरस्वामिनो नाम को न जानाति पण्डितः ॥६४॥

भट्टयज्ञेश्वरसुतो भट्टपादकुमारिलः ।
श्लोकवार्तिकमातेने तन्त्रवार्तिकमप्यथ ॥ ८६ ॥

कुमारिलभट्ट ने शावरभाष्य पर श्लोक वार्तिक, तथा तन्त्र वार्तिक लिखा । भट्टपाद तैलङ्ग देशके रहने वाले थे । इनका जन्म ७९८ में हुआ, जैन धर्म के प्रावल्य से लुप्त वैदिक धर्म की इन्होंने चम्पानगरी के राजा सुधन्वा की सहायता से पुनः प्राणप्रतिष्ठा की । जैसा कि शंकर दिग्विजय में लिखा भी है "कुमारिलमृगेन्द्रेण हतेपुजिनहस्तिपु । निष्प्रत्यूहमवर्द्धन्त श्रुतिशाखाः समन्ततः ॥ वेदों में इनकी अपूर्व श्रद्धा थी । यहाँ तक कि बौद्धों से वेद रक्षा करने के लिए इन्होंने ईश्वर का भी खण्डन कर डाला । सृष्टिकर्ता ईश्वर नहीं माना । ये कहते हैं कि शरीरधारी ईश्वर सर्वज्ञ नहीं हो सकता । और "शरीरादेर्विना चास्य कथमिच्छाविसर्जने ।" ये वेदों को भी ईश्वरकृत नहीं मानते । जैसा कि लिखते हैं—"वेदानामी-श्वराज्जन्म केवलं श्रुतिषुश्रुतम् । मानान्तरोपलब्धेऽर्थे रचना तु न मीयते॥ मीमांसा में अनीश्वरवाद इन्हीं से आरम्भ हुआ है । परन्तु वह इन सब को अभीष्ट नहीं है । तभी तो श्लोकवार्तिक में भट्टपाद ने न्यायप्रकाश में आपदेव ने, और अर्थसंग्रह में लौगाक्षि ने ईश्वर विषयक मंगलाचरण किया है । जैमिनी भी ईश्वरवादी हैं—परं जैमिनीमुख्यत्वात्, वेदा० ४-३-१२ भट्टपाद ने वार्तिकमें कई वैदिक कथाओंका रहस्य बड़ी खूबीसे प्रकटित कियाहै । जैसे"अहल्या नाम 'अहनिलीयते" इस व्युत्पत्ति से रात्रि का, और उसका जार-क्षयकर्ता इन्द्र से परमैश्वर्यशाली सूर्य माना है । इसी प्रकार प्रजापति शब्द से भी प्रजापालनाधिकार से सूर्य और सरस्वती से ऊषा मानकर

उसके पीछे दौड़ना सिद्ध किया है । द्रौपदी के पांच पति के विषय में लिखा है—'द्रौपद्या सीन्महालक्ष्मी र्वहुभुक्तानदुष्यति । कात्यायन, बौधायन, आश्वलायन, आपस्तम्ब, षड्गुरुशिष्य, सायण, कणाद, जैमिनि शवरस्वाम्यादि आचार्यों ने मन्त्र और ब्राह्मण दोनों को बराबर वेद माना है। यद्यपि वेद के ब्राह्मण भाग में कुछ पशुयज्ञों का वर्णन है, जिन की धर्म के साथ उपपत्ति करना बड़ा कठिन है। इसी भय से स्वामीदयानन्दजी ने ब्राह्मण ग्रन्थों को वेद नहीं माना । परन्तु भट्टपाद कुमारिल ने यज्ञीयहिंसा के सम्बन्ध में पूर्ण विचार कर के ब्राह्मण ग्रन्थों को वेद ही माना है । भट्टपाद कहते हैं कि प्रत्येक कर्म के साध्य और साधन, दो भाग होते हैं। साध्य विषय में हिंसा निन्दित है जैसे 'पूयेनयज्ञ' । क्योंकि इसका लक्ष्य शत्रुवध है। परन्तु साधनांश की हिंसा हिंसा नहीं । वैद्य-रोगी को चिकित्सा करता है, उसमें शस्त्र क्रिया भी करनी पड़ती है। एवं राजधर्म में एक हत्यारे को फांसी देनी पड़ती है। वे दोनों हिंसा नहीं, धर्म हैं। इसी तरह यज्ञ में पशु हिंसा फलांश में यद्यपि निषिद्ध है, तथापि पाप जनकतापेक्षया पुण्यजनकता उसमें बहुत अधिक है। यही बात महाभाष्य में पतञ्जलि ने 'कूपखानक' न्याय से सिद्ध की है। शंकरदिग्विजय के अनुसार स्वामीशंकराचार्यजी और भट्टपाद का समागम प्रयाग में हुआ था। अतः भट्टपाद का स्थिति समय विक्रमीय नवमशतक अर्थात् ८६५ तक माना जाता है । श्लोकवार्तिक पर पार्थसारथि की 'न्यायरत्नाकर' और तन्त्रवार्तिक पर सोमेश्वर की 'न्यायसुधा' टीका है । कुमारिल के विषय में हमारा यह पद्य है—"यद्यग्रहीष्यन्नो जन्म भट्टपादो भुवस्तले । तदा श्रौतस्मार्तधर्मो नाममात्रमशेक्ष्यत ॥९५॥

प्रभाकरेण विहिता बृहती स्वमतानुगा ।

अथ शालिकनाथेन वृहतीसारपञ्चिका ॥८७॥

चोल देशीय मीमांसक प्रभाकर ने शाबर भाष्य व्याख्या 'वृहती' और उसके शिष्य मीमांसक शालिकनाथ ने वृहती का सार ग्रहण करके 'प्रकरणपञ्चिका' लिखी । प्रभाकर का दूसरा नाम गुरु है । यह कुमारिलभट्ट का ही शिष्य था । मीमांसा में भाट्ट सम्प्रदाय की तरह गुरु संप्रदाय भी प्रसिद्ध है दोनों का मूल जैमिनीय सूत्र ही है ॥

चक्रे विधिविवेकं श्रीमिश्रमण्डनपण्डितः ।
महाविद्वान् मिश्रपार्थसारथिः शास्त्रदीपिकाम् ॥८८॥

प्रसिद्ध मण्डन मिश्र ने विधि विवेक और पार्थसारथि ने शास्त्र-दीपिका ग्रन्थ बनाया । मण्डन मिश्र की मीमांसानुक्रमणिका और पार्थसारथि की न्यायरत्नमाला भी द्रष्टव्य है इन दोनोंका समय नवम शतक उत्तर भाग है । मण्डन मिश्र और पार्थसारथि भी कुमारिल भट्ट के ही शिष्य थे । मण्डन मिश्र मगध का और पार्थसारथि मिथिला का निवासी था । स्वामी शंकराचार्यजी ने मण्डन को शास्त्रार्थ में हराकर अपना शिष्य बना लिया था । और इसका नाम सुरेश्वराचार्य रख दिया था । इसी का तीसरा नाम उम्वेक था । इसने श्लोकवार्तिक की टीका भी लिखी है । एक जगह लिखा मिला है—"उम्वेको वार्तिकं वेत्ति तन्त्रं वेत्ति प्रभाकरः । मुरारिस्तूभयंवेत्ति सर्वं वै पार्थसारथिः ॥ इसका चौथा नाम विश्वरूप था, अतः याज्ञवल्क्यस्मृति टीकाकार भी यही है । इसकी स्त्री शारदा बड़ी विदुषी थी । और संक्षेप शारीरक निर्माता सर्वज्ञात्ममुनि इसका शिष्य था । सर्वज्ञ का स्थिति समय ९३५ तक है । विधि विवेक पर वाचस्पति की न्यायकणिका, और शास्त्रदीपिका पर राम कृष्ण की सिद्धान्त चन्द्रिका और सोमनाथ की मयूख मालिका टीका है ॥

तत्त्वविन्दुं महाप्राज्ञो वाचस्पतिरकल्पयत् ।
जैमिनीयन्यायमालाविस्तरमार्यमाधवः ॥८६॥

वाचस्पति मिश्र ने तत्त्व विन्दु और माधवाचार्य ने न्यायमाला विस्तर ग्रन्थ लिखा । वाचस्पति मिश्र का समय पीछे दिखा दिया है । माधवाचार्य का स्थिति समय वोपदेव से कुछ पीछे है, अर्थात् विक्रमीय चतुर्दशशतक उत्तर भाग और पंचदश शतक पूर्व भाग है । क्योंकि माधव ने धातुवृत्ति में वोपदेव का खण्डन किया है । चतुर्वर्ग चिन्तामणिकार हेमाद्रि और मुग्धबोध रचयिता बोपदेव का निश्चित समय १३२८ है । माधवाचार्य वेदभाष्यकार सायणाचार्य का बड़ा भाई और विजयनगर के बुक्कभूपति का कुल गुरु तथा मन्त्री था । और उसके ही कहने से यह ग्रन्थ माधवाचार्य ने लिखा था । यह वात इस ग्रन्थ में स्पष्ट लिखी है—"कुरु विस्तरमस्यास्त्वमिति माधवमादिशत् ॥ माधवाचार्य की जन्मभूमि मद्रास प्रान्तमें उन्नपी ग्राम था । इनकी माता का नाम श्रीमती और पिता का नाम मायण था । जैसा कि लिखा भी है "श्रीमती जननी यस्य पिता श्रीयुतमायणः । अनुजः सायणाचार्यः सर्वज्ञः स हि माधवः ॥ वेदभाष्यकारवेङ्कटमाधव इससे बहुतप्राचीन है । कालमाधव, और पाराशरमाधवकर्ता भी सायणमाधव ही है ॥

खण्डदेवेन रुचिरा विदधे भाट्टदीपिका ।
भाट्टचिन्तामणिं गागाभट्टश्चक्रे प्रयत्नतः ॥९०॥

खण्डदेव ने भाट्ट दीपिका, और गागाभट्ट ने भाट्ट चिन्तामणि ग्रन्थ वनाया । भाट्टदीपिका पर खण्ड देव के शिष्य शंभुभट्ट की और भाट्टचिन्तामणि पर पं० सूर्यनारायणशुक्ल काशी की टीका है । १६६८ के निर्णयसिन्धुकार कमलाकर भट्ट के भतीजे काशी

निवासी गागाभट्ट ने १७२१ विक्रमाब्द में छत्रपति शिवाजीका राय-गढ़ में राज्यासनाभिषेक किया था। गागाभट्ट का स्थिति समय यही है। और खण्डदेव का सप्तदश शतकमध्य भाग तक है। यही समय कमलाकर भट्ट के पितृव्य मीमांसासार—संग्रहकार भट्ट शङ्कर का है। खण्डदेव, पण्डितराज जगन्नाथ के पिता का मीमांसाशास्त्र का गुरु था। और काशी में रहता था। खण्डदेव और गागाभट्ट के ग्रन्थकी प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"मीमांसा शास्त्रपाण्डित्य-प्राप्तये भाट्टदीपिका। भाट्टचिन्तामणी नूनं द्रष्टव्यावेकदा बुधाः ॥९४॥

आपदेवेन मीमांसाप्रकाशः संप्रकाशितः।
लौगाक्षिभास्करस्सुधीरर्थसंग्रहमातनोत् ॥६१॥

आपदेव ने मीमांसान्याय-प्रकाश, और लौगाक्षि ने अर्थ-संग्रह लिखा। इन दोनों का स्थिति समय क्रम से विक्रमीय अष्टा-दश तथा सप्तदशशतक है। मीमांसाधिकरण कौमुदीकार रामकृष्ण भट्टका और मीमांसा-परिभाषाकार कृष्णयज्वा का भी लगभग यहीं समय है। आपदेव ने वेदान्तसार की टीका, और लौगाक्षि ने तर्क-कौमुदी भी लिखी है। आपदेव मध्यप्रदेश का और लौगाक्षि दक्षिण गोदावरी प्रान्त का रहने वाला था। न्याय प्रकाश पर ग्रन्थकारके पुत्र अनन्तदेव की तथा वर्तमान पं० चिन्नस्वामी काशी की, और अर्थ संग्रह पर रामेश्वरभिक्षुकी तथा कलिकाता निवासी जीवानन्द विद्यासागर की टीका है। आपदेव और लौगाक्षि के विषय में हमारा यह पद्य है—'मीमांसासारमाहर्तुं कृतभूरि परिश्रमः। आपदेवः प्रशंसार्हस्तथा लौगाक्षिभास्करः ॥९५॥

ज्ञानकाण्डप्रचाराय वेदव्यासो महामुनिः।
कृतवानद्भुतां गीतां तथा वेदान्तदर्शनम् ॥६२॥

ज्ञानकाण्ड के प्रचारार्थ कुरुक्षेत्र निवासी महर्षि वेद व्यास जीने गीता तथा वेदान्त दर्शन लिखा । "ब्राह्मेण जैमिनिरुपन्यासादिभ्यः । भावं जैमिनिर्विकल्पामननात्" इत्यादि सूत्रों में जैमिनि के मतका स्मरण होने से सिद्ध होता है कि पहले पूर्वमीमांसा तदनन्तर उत्तर मीमांसा बनी । भगवद्गीता पवित्र कुरुक्षेत्र भूमि में पूर्णावतार आनन्दकन्द स्वयं भगवान् कृष्ण के मुखारविन्द से निकली है । इसके विषय में हमारा यह पद्य है— "भवाब्धिमग्नो यां श्रित्वा गच्छेत् पारं भवाम्बुधेः । वर्तते साऽग्निजवद्गीता हरिमुखोद्गता ॥ ९६ ॥ गीता का सारा सारांश जीव ब्रह्मज्ञान, निष्काम—भक्ति तथा निष्काम कर्म है । वेदान्तदर्शन में चार अध्याय हैं । इसमें जीव और ब्रह्म का एकत्व प्रतिपादन किया गया है । वेदान्त के आगे कोई शास्त्र ठहर नहीं सकता । यथा "तावद्गर्जन्ति शास्त्राणि जम्बुका विपिने यथा । न गर्जति महाशक्तिर्यावद्वेदान्तकेशरी ॥ तथा "एकं ब्रह्मास्त्रमादाय नान्यंगणयतः क्वचित् । न भवेद्वीरवीरस्यभंगः शास्त्रार्थसंगरे ॥ पूर्वमीमांसा और उतर मीमांसा दोनों समान तन्त्र है । जैसा कि लिखा भी है—"जैमिनीये च वैयासे विरुद्धांशो न कश्चन । श्रुत्या वेदार्थविज्ञाने श्रुतिपारं गतौहितौ ॥ श्रीव्यासजी का स्थितिसमय कलि के प्रथमशतक तक है ॥

तत्सत्यार्थप्रकाशाय भगवत्पादशंकरः ।
वेदान्तोपनिषद्गीताभाष्यत्रयमकल्पयत ॥९३॥

गीता उपनिषत् तथा वेदान्तदर्शन का सत्यार्थ प्रकाशन करने के लिए शंकराचार्यजी ने तीनों पर भाष्य लिखे । गीता पर १३ सौ के भागवत टीकाकार श्रीधर की श्रीधरी, १४ सौकी शंकरानन्दी १६ सौके भारत टीकाकार नीलकण्ठ की नीलकण्ठी और १७ सौके

मधुसूदनकी मधुसूदनी प्रभृति टीकायेंभी द्रष्टव्य हैं। वेदान्तसिद्धान्त यद्यपि प्राचीन समय से भारतवर्ष में प्रचलित है । तथापि इसका अधिक प्रचार शांकर ग्रन्थों से हुआ है। वेदान्त के शांकर भाष्य में पदपद पर श्रुतिप्रामाण्य गृहीत है । वेदान्त इसको इसलिए कहते हैं कि वेद के अन्तिम भाग उपनिषद् वाक्यों का इसमें समन्वय किया गया है। वेदान्त सूत्रों पर यह भाष्य सुवर्ण में सुगन्ध के सदृश है । शंकराचार्यजी का मत अद्वैत कहलाता है । जिसकी साधक "ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः" ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति "एकं ब्रह्म द्वितीयं न" इत्यादि अनेक श्रुतियां हैं । जिस प्रकार यज्ञादि कर्म करना त्रैवर्णिक गृहस्थी को नित्य है, इसी प्रकार (ब्रह्म) परमात्मा का विचार करना भी सब को नित्य है । वेदान्त मुक्तावलीकार प्रकाशानन्द लिखते हैं—"कुलं पवित्रं जननीकृतार्था वसुन्धरा पुण्यवती च तेन । अपारसच्चित्सुखसागरेऽस्मिन् लीनं परे ब्रह्मणि यस्य चेतः ॥ शंकराचार्यजी, अद्वैत ब्रह्मज्ञानसे ही मोक्ष मानते हैं । यही सिद्धान्त वेदान्त सूत्रों का समझना चाहिये । इस विषय में हमारा यह पद्य है—"व्यासो नारायणः प्रोक्तः शंकरोऽपि च शंकरः । ताभ्यां सूत्रे च भाष्ये च कृते किमवशिष्यते ॥९७॥ परन्तु "ईश्वरानुग्रहादेवा पुंसामद्वैतवासना । महाभयकृतत्राणा द्वित्राणामेव जायते ॥ शंकराचार्यजी का जन्म-केरल देश के कालटी ग्राम में द्रविड़ ब्राह्मण-शिव गुरु शर्मा की धर्मपत्नी सुभद्रा के गर्भ से—"विधिनागेश वह्न्यब्दे विभवे मासि माधवे । शुक्लपक्षे दशम्यां तु शंकरार्योदयः स्मृतः॥ इस परम प्रसिद्धि के अनुसार ८४५ वि० में वैशाख शु० १० मी को हुआ था । गोवर्धन मठ की सूची से इनका जन्म विक्रम संवत् से ४११ वर्ष पूर्वसिद्ध होता है । तथापि भाष्यकार-शंकराचार्य का जन्म समय ८४५ वि० ही ठीक प्रतीत होता है । क्योंकि शांकरभाष्य में शाबरभाष्यकार-शबरस्वामी का स्पष्ट नामोल्लेख है । शबरस्वामी

ने हर्षवर्धन के लिङ्गानुशासन कोषकी व्याख्या लिखी है। जो कि अब प्राप्तहो गई है। कुमारिल भी इन्हींका समकालीन था। क्योंकि उसने शावरभाष्यकी टीका, और कालिदासका "सतांहि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तः करण प्रवृत्तयः" (अभि० शा०) पद्य तन्त्रवार्तिकमें उद्धृत किया है। शंकराचार्यजी ने 'ब्राह्मणस्य तु देहोऽयं क्षुद्रकामाय नेष्यते। ज्ञानाय तपसे चेह प्रेत्यानन्तसुखाय च॥ यह जानकर गोविन्द भगवत्पाद से संन्यासग्रहण करके अद्भुत पाण्डित्य प्राप्त किया। फिर वेदविरोधियोंको पराजित करके चार दिशाओंमें चार मठ स्थापित किये। उत्तर में ज्योतिर्मठ, पूर्व में गोवर्धनमठ दक्षिण में शृंगेरीमठ पश्चिम में शारदामठ। जिनमें अब तक उनके ४ शिष्य पद्मपाद, हस्तामलक, तोटक, सुरेश्वर, की दशनामि—शिष्यपरंपरा विद्यमान है। श्रीशंकराचार्यजी महाकवि भी थे। उन्होंने सौन्दर्यलहरी, चर्पटमञ्जरी, मोहमुद्गर, प्रभृति अनेक स्तोत्र ग्रन्थ, तथा अमरुशतक खण्डकाव्य लिखा। जिसके विषय में "अमरूककवेरेकः श्लोकः प्रबन्धशतायते" यह प्रसिद्धि है। इनका स्थिति समय पूर्वमतानुसार ८७७ पर्यन्त है। ये ३२ वर्ष की अवस्था में बद्रिकाश्रम में समाधिस्थ हुए। वेदान्त सूत्रों की शांकरभाष्यानुसारिणी हमारी वृत्ति भी द्रष्टव्य है। इसका मत है "अद्वैतबोधेन विना तु मुक्तिर्न जायते जन्मशतान्तरेऽपि॥सशांकरग्रन्थविलोकनेन सद्योहृदिद्यौनतएवपुंसः ॥९७॥

न्यायनिर्णयमानन्दगिरिः शारीरकेऽव्यधात्।
भामतीं तत्र विवृतिं मिश्रवाचस्पतिस्तथा ॥९४॥

शारीरक भाष्य पर तोटकाचार्यापर नामक आनन्दगिरिने न्याय निर्णय, और षड् दर्शनाचार्य वाचस्पति मिश्रने अपनी स्त्रीके नाम से भामती टीका लिखी। इस भाष्य पर सबसे सुगम टीका १७ सौके

गोविन्दानन्द की रत्नप्रभा है। शंकर दिग्विजय के अनुसार आनन्दगिरि शंकराचार्य जी के शिष्य थे। शंकराचार्यजी के सबसे बड़े शिष्य दक्षिण चोल देशीय पद्मपादाचार्य की भी भाष्य पर पंचपादिकाटीका है। इस पर भी प्रकाशात्मयति का विवरण है। वाचस्पति मिश्र मिथिला के रहने वाले थे। किसी नृग राजा के शासन काल में यह टीका लिखी गई थी। समय ८९८ के लगभग है। भामती पर त्रयोदश शतक के दक्षिणी स्वामी अमलानन्द की कल्प तरु और १५ सौ के अखण्डानन्द की ऋजु टीका है। आनन्दगिरि तथा वाचस्पति की प्रशंसा में हमारे ये पद्य हैं—"वेदान्तभाष्यमूलार्थनिर्णयेन महामतिः। आनन्दगिरिरानन्दप्रदः कस्य न भूतले ॥९८॥ "व्यासो नारायणः साक्षाच्छंकरोऽपि च शंकरः। तयोराशयविज्ञाता कोऽन्यो वाचस्पतेर्भवेत् ॥९९॥

श्रीश्रीकण्ठो महाशैवः शैवभाष्यं प्रणीतवान् ।
श्रीमान् रामानुजाचार्यः श्रीभाष्यं वैष्णवाग्रणीः॥८५॥

शिवाद्वैतवादि महाशैव श्रीकण्ठ ने वेदान्त सूत्रों का शैवभाष्य, और वैष्णव शिरोमणि श्रीरामानुज ने संहिताकार-गर्गमुनि के शिष्य बोधायन की वृत्यनुसार श्रीभाष्य लिखा। श्रीकण्ठ कर्णाटक देश के गोकर्ण क्षेत्र के रहने वाले थे। इनका श्रीशंकराचार्य जी के साथ शास्त्रार्थ हुआ था इसने अपने भाष्य में शङ्कराचार्यजी के मतका भी उल्लेख किया है। अतः इनका स्थिति समय विक्रमीय नवम शतक है। इसके मतमें शिव ही पर ब्रह्म हैं। श्रीरामानुज मद्रासके समीपवर्ति पेरम्बु—ग्राम के वासि केशव भट्टके पुत्र, थे और ये विशिष्टाद्वैत मतवादी थे। प्रपन्नामृत में श्रीरामानुज का जन्म १०७३ और स्थिति समय ११८४ विक्रमाब्द तक लिखा है। इनका अध्ययन काञ्ची में हुआ और ये रहते श्रीरंग में थे।

इन दोनों की प्रशंसा में हमारा यह पद्य है—"अपारे खलु संसारे बहवः शैववैष्णवाः । श्रीकण्ठ रामानुजयोः समानो न निशम्यते ॥१००॥

निम्बार्कभाष्यमातेने निम्बार्कः सर्वतन्त्रवित् ।
मध्वाचार्योमाध्वभाष्यमणुभाष्यं च वल्लभः ॥६६॥

श्रीनिम्बार्क ने वेदान्त सूत्रोंपर निम्बार्क भाष्य, और श्रीमध्वाचार्य ने माध्व भाष्य, और श्रीवल्लभाचार्य ने अणुभाष्य लिखा । ये तीनों भी वैष्णवाचार्य हैं। इन तीनों की प्रशंसामें हमारा यहपद्य है-"निम्बार्कः स्वयमर्कोऽभूल्लोकानुग्रहकांक्षया । श्रीमध्वोमाधवःश्रीमान्वल्लभो गोपिवल्लभः॥१०१॥भर्तृप्रपञ्चके द्वैताद्वैतमतवादी श्रीनिम्बार्काचार्य संन्यास ग्रहणसे पहले प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् भास्कराचार्य कहलाते थे । ये कर्णाटकदेशीय महेश्वरोपाध्यायके पुत्र थे। नल चम्पूकार प्रसिद्ध त्रिविक्रम भट्ट इन भास्कराचार्यका षष्ठ पूर्व पुरुष था। भास्कराचार्य ने अपना समय सिद्धान्तशिरोमणि में स्वयं लिखा है—"रसगुणपूर्णमहीमित (१०३६) शकनृपसमयेऽभवन्ममोत्पत्तिः" इसके अनुसार ११७१ विक्रमाब्द में निज़ाम राज्य में इनका जन्म हुआ। इन्होंने अपने को सर्व तन्त्रज्ञ लिखा है। संन्यास लेने के बाद ये वृन्दावन में रहे। वृत्तरत्नाकरकार केदारभट्ट ने लगक्रिया में इनकी लीलावती का अनुकरण किया है। उसका भी लगभग यही समय है। दक्षिण तुलव देशीय वेलिग्राम निवासी मधिभट्ट के पुत्र द्वैतमतवादी श्रीमध्वाचार्य,विक्रमीय त्रयोदशशतक १२६६ में उडीपी में विद्यमान थे। तैलङ्ग देशीय लक्ष्मण भट्टके पुत्र श्रीवल्लभाचार्य, शुद्धाद्वैत मतवादी थे। इन्होंने १५३५ जन्म लिया और गोकुलमें रह कर विष्णु स्वामीका मत पुष्ट किया है। इनका स्थिति समय विक्रमीयषोडश शतक अर्थात् १५८८ तक है। इन चारों आचार्यों के मतमें दुःख ध्वंस होने पर जीव मुक्त हो जाता है। पर वह ब्रह्म

(विष्णु)से पृथक् रहता है इन चारों ने अपने सम्प्रदायों द्वारा विष्णु भक्तिका खूब प्रचारकिया । इनके मतमें भक्ति ही मुक्तिका साधन है॥

खाद्यखण्डनमातेने श्रीहर्षः कवितार्किकः ।
चित्सुखी रचिता श्रीमत् चित्सुखेन विलक्षणा॥९७॥

अद्वैत वेदान्तस्तम्भ, कान्यकुब्ज देशीय श्रीहर्ष मिश्र ने खाद्य खण्डन और स्वामि चित्सुख ने चित्सुखी नामक ग्रन्थ बनाया । खाद्य खण्डन में अपने पिता के विजेता नैयायिक उदयनाचार्य के ग्रन्थों का खण्डन किया गया है । श्रीहर्ष ने खाद्य खण्डन को द्वैत वादियों के विजयका परमसाधन कहा है । यथा "धीरा यथोक्त मपि कीरवदेतदुक्त्वा लोकेषु दिग्विजय कौतुकमातनुध्वम् ॥ श्रीहर्षका स्थिति समय द्वादश शतक है । यह दिल्ली सम्राट् महाराज पृथ्वीराज समकालिक कन्नौज के राजा जयचन्द्र का सभा पण्डित था । जयपुर के म० म० दुर्गाप्रसाद जीके १२२५ के शिलालेख का भी भी वही मत है । खाद्यखण्डन पर हर्ष मिश्र के शिष्य आनन्द पूर्ण की विद्यासागरी और शंकर मिश्र की शांकरी टीका है । चित्सुख मुनि भागवत के प्रसिद्ध टीकाकर्ता श्रीधरस्वामी का गुरु था । यह वात श्रीधरस्वामी की विष्णुपुराण व्याख्या से स्फुट है । चित्सुख मुनिका स्थिति समय विक्रमीय त्रयोदश शतक का उत्तर भाग है । इसने आनन्दबोधभटारक के न्याय मकरन्दकी टीका भी लिखी है । आनन्द बोध और ब्रह्म-विद्याभरणकार अद्वैतानन्द श्रीहर्ष के समकालिक थे ।न्याय मत खण्डनादि चित्सुख ने खाद्य खण्डन के ही आधार पर किया है । जैसा कि इस विषय में विद्यारण्य का यह पद्य है—"निरुक्तावभिमानं ये दधते तार्किकादयः । शिक्षिता हर्षमिश्रेण चित्सुखेन च ते बुधाः ॥ चित्सुखीपर-परमहंस प्रत्यग्रूप की नयनप्रसादिनी टीका है ॥

चक्रे पञ्चदशीं विद्यारण्यनामा स माधवः ।
वेदान्तपरिभाषां च धर्मराजाध्वरो सुधीः ॥९८॥

विद्यारण्यमुनि ने पंचदशी और धर्मराजाध्वरी ने वेदान्त परिभाषा लिखी । विद्यारण्य वैयासिक न्यायमालाकार भारतीतीर्थ का और धर्मराजाध्वरी विद्यारण्यके परममित्र १४३३ के न्यायपरिशुद्धि न्यायसिद्धाञ्जनकर्ता वेदान्तदेशिक वेङ्कटनाथका शिष्य था। विद्यारण्य का स्थिति समय पंचदश शतक पूर्वभाग तक और धर्मराजाध्वरी का पंचदश शतक उत्तरभाग है। यही समय वेदान्तमुक्तावलीकार प्रकाशानन्द का है। शंकर दिग्विजय, सर्वदर्शन संग्रह, विवरण प्रमेयसंग्रह, व्याकरण में माधवीय धातु वृत्तिकार भी यही है। क्योंकिविद्यारण्य माधवाचार्यका ही संन्यासी होने के बाद का नाम है। यह सायणाचार्य का बड़ा भाई और विजय नगर के राजा हरिहरबुक्क का मन्त्री था। धर्मराजाध्वरी कांची प्रान्त का निवासी था । इसने न्याय चिन्तामणि की टीका भी लिखी है। भेदधिक्कारकर्ता—श्रीनृसिंहाश्रम इसके परम गुरु थे। पञ्चदशी पर विद्यारण्य के शिष्य रामकृष्णकी तत्त्वविवेक टीका, और वेदान्तपरिभाषा पर शिखामणि, मणिप्रभा और अर्थ दीपिकाटीका हैं। पंचदशी और वेदान्तपरिभाषा के विषय में हमारा यह पद्य है— "वेदान्ततत्त्वविज्ञाने मान्या पंचदशी यथा । वेदान्तपरिभाषा च तथा मूलार्थबोधने ॥१०२॥

अद्वैतसिद्धिंकृतवान् स्वामी श्रीमधुसूदनः ।
वेदान्तसारमातेने सदानन्दो यतीश्वरः ॥९९॥

अद्वैतवाद—महारथि मधुसूदन स्वामी ने अद्वैत सिद्धि और सदानन्द ने वेदान्तसार लिखा। अद्वैतसिद्धि की टीका मधुसूदन समकालिक गौड़ ब्रह्मानन्दी है। सिद्धान्त बिन्दु और भगवद्गीता

की मधुसूदनी टीका प्रस्थान भेद भक्तिरसायन, अद्वैतरत्नरक्षण प्रभृति और भी कई ग्रन्थ इन्हीं मधुसूदन ने लिखे हैं। इनकी अद्वैतसिद्धि, खाद्यखण्डन की शैली का अपूर्व ग्रन्थ है। इसी के आश्रय से सदानन्द ने 'अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसार' लिखा। ये दोनों काशीनिवासी थे। मधुसूदन का जन्म कोटालिपाड़ा बंगाल में हुआ था। मधुसूदनजी ने नवद्वीप में रहकर गदाधर भट्टाचार्यके साथ न्याय भी पहले खूब पढ़ा था। सदानन्दका प्रशिष्य वेदान्तसार टीकाकार-नृसिंह सरस्वती था। उसने वेदान्तसार की टीका १६४५ में काशी में लिखी। अद्वैतब्रह्मसिद्धिकार-काश्मीरिक सदानन्दयति, इस सदानन्द से ५० वर्ष पीछे का है। मधुसूदन तथा सदानन्द के विषय में हमारा यह पद्य है—"अद्वैतसाधने यद्वत् सफलो मधुसूदनः। वेदान्तसारनिर्यासे सदानन्दस्तथैव हि॥ १०५॥ वेदान्तसार कर्ता सदानन्द व्यास का तथा मधुसूदन का स्थिति समय १६५० तक है वेदान्त में साम्प्रतिक स्वा० सदाशिवेन्द्र की ब्रह्म सूत्र वृत्ति, स्वा० भास्करानन्द की स्वराज्य सिद्धि, स्वा० विमलानन्द का वेदान्तसार-संग्रह और स्वा० ब्रह्मानन्द का ईश्वर दर्शन और स्वामि भागवतानन्द मण्डलेश्वर प्रभृति के ग्रन्थ भी द्रष्टव्य हैं।

श्रीभारतीकृष्णतीर्थाद शङ्करार्याज्जगद्गुरोः।
विद्यासागरशब्दाङ्कमीयुषा विदुषा मया ॥१००॥

जगन्नाथपुरी के गोवर्द्धन मठाधीश्वर परमहंसपरिव्राजकाचार्य जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीभारती कृष्णतीर्थजी महाराज को मैंने अपने सब ग्रन्थ दिखाये। वे मेरे ग्रन्थों को देख कर अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। ठीक लिखा है—"गुणागुणज्ञेषु गुणा भवन्ति ते निर्गुणं प्राप्यभवन्तिदोषाः॥ इसके उपलक्ष्यमें उन्होंने सहस्र विद्वानों की सभा में मुझको विद्यासागर पदवी, सौ रुपये, एक दुशाला प्रसाद दिया॥

क्तेनैतेनाद्भुतेन शतकेन समं बुधैः ।
प्रीयेतां जगतां नाथौ पार्वतीपरमेश्वरौ ॥१०१॥

भारत सम्राट् पञ्चमजार्ज के राज्य समय १९९२ में निर्मित सव्याख्यान इस शतक-द्वय से विद्वानों के सहित श्रीपार्वती और परमेश्वर, मम धर्मपत्नी भक्ति देवी, पुत्री सुशीला पुत्रसुशील सहित मुझ पर प्रसन्न होवें। और—"कृत्वायोमां काव्यकारेषु रत्नं चक्रे विद्यासागरं चापि भूयः। ख्यातिं निन्ये तत्पदाभ्यां च लोके तस्मिन् सोमे शंकरे मे रतिः स्तात् ॥ "श्लाघास्पदंयद्यपिपण्डितानामिदं ग्रंथं मे नभवेत्तथापि विद्यार्थिभिर्नूनमिदं विलोक्यं समस्तशास्त्रार्थविदमुदेच ॥

इति श्रीछज्जूरामशतकद्वये पूर्वोत्तरमीमांसाग्रन्थकर्तृ परिचय-नामकः षष्ठपरिच्छेदः समाप्तः ॥

॥ श्रीः ॥
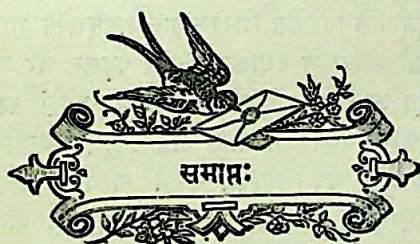
पण्डित छज्जूरामविद्यासागर ।

लेखक—

पं० कृष्णदत्तभारद्वाजशास्त्री एम० ए०, देहली ।

महर्षियों वैदिक का आदि स्थान श्रुति-स्मृति-पुराण-इतिहास प्रसिद्ध परम पवित्र कुरुक्षेत्र भूमिके मध्यमें लावला शेखपुरा नामक एक ग्राम है । उसमें गौड़ पण्डित हरनाथजीहुए । उनके फकीरचन्द्र विहारीलाल नामक दो पुत्र हुए । फकीरचन्द्रजी के मोत्तराम,मनसाराम,नन्हुराम,शिवदत्त,४पुत्र हुए । पण्डित मोत्तरामजी की धर्मपत्नी सती मामको देवी के गर्भसे मूलचन्द्र, छज्जूराम,नेकीराम,रामकृष्ण, नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए । हमारे चरित्रनायक पण्डित छज्जूराम जीका जन्म १९५२ विक्रमाब्द में हुआ । ग्राम्य प्रथाके अनुसार दश वर्ष आपके बालक्रीड़ा में ही व्यतीत हुए । जब आपके पितृव्य श्रीमतीसुखदेवीपति पण्डित शिरोमणि-शिवदत्तजी शास्त्री, म० म० दामोदर शास्त्री काशी से व्याकरणशास्त्र पढ़कर घर पर आये, तब आपकी शिक्षा का प्रारम्भ हुआ । आपके ज्येष्ठ भ्राता-पण्डित मूलचन्द्र जी कर्मकाण्ड के प्रकाण्ड विद्वान् हुए । उन्हींकी सहायता से आपने सब कुछ पढ़ा । आपने अपने चाचा पण्डित शिवदत्त जीके पास अमरकोश, लघुकौमुदी,सिद्धान्तकौमुदी, शेखर महाभाष्यादि व्याकरण के सम्पूर्ण ग्रन्थ पढ़े । तदनन्तर उन्हीं ग्रन्थोंका परिमार्जन वैयाकरणकेशरी पं० परमानन्द जी शास्त्री से मुजफ्फर नगर में और काशीस्थ व्याकरण मूर्ति तिवाड़ी जी के मित्र महावैयाकरण पण्डित-हीरालाल जी शास्त्री से गागरमल्ल पाठशाला अमृतसर में किया । फिर आप परीक्षा देने केविचार से विद्यामा-

तखण्ड पण्डित सीतारामजी शास्त्रीके पास भिवानी में आये। उनसे आपने सांख्यन्यायादि दर्शनशास्त्र, साहित्यशास्त्र, और निरुक्त पढ़ा। और उन्हींके नामसे पञ्जाबकी विशारद तथा शास्त्री परीक्षा पास की। आगे आप अंग्रेजी पढ़नेका विचार करते थे, परन्तु खेद है कि इसीअवसरमें आपके ज्येष्ठ भ्राता श्रीमतीभूलादेवीपतिपण्डित मूलचन्द्र जीका स्वल्पायुमें स्वर्गवास होगया। घरका सब कार्य भार उन्हींपर निर्भर था। अब वाध्य होकर आपने कार्य करनेका विचार किया। सर्वप्रथम आप सनातन धर्मपाठशाला जीन्दमें प्रधानाध्यापक पद पर नियुक्त हुए। यद्यपि आप वाल्यावस्था से ही परम शिव भक्त हैं, तथापि अब आप और भी अधिक प्रतिदिन शिवपूजन तथा दुर्गापाठ करने लगे। जिससे कुछ दिनों के वाद हीं आपकी विद्या चमत्कृत हो उठी। बारम्बार आप यही उपदेश किया करते हैं— "ब्राह्मणस्य च देहोऽयं क्षुद्रकामाय नेष्यते। ज्ञानाय तपसे चेह प्रेत्या-नन्तसुखाय च॥ "यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ। तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः॥ ठीक भी है, क्योंकि महापुरुषों का कथन है—"सकल शास्त्र पाण्डित्य हो उदय अस्तलों राज। विना भक्ति भगवान् की सब झूठा है साज॥ इस असार संसार में पाँच वस्तु हैं सार। सन्त मिलन, भगवद्भजन, दया, दान, उप कार॥ जब आपकी अवस्था २२ वर्ष की थी तब हृषीकेशके महन्त ब्रह्मचारी जयराम जी कूटस्थ जा सादी राम जी के शिष्य पण्डित गंगास्वरूप जी ब्रह्मचारी ने अपनी महाभारत कथा की समाप्ति के उपलक्ष्य में सफीदम (जीन्द) नगरमें एक निखिल भारतीय विद्वत्स-म्मेलन किया। जिसमें सहस्रों विद्वान् तथा जगद्गुरु शंकराचार्यजी गोवर्धनमठाधीश भी पधारे थे। दर्शन विषय पर आपका सर्वोच्च भाषणहुआ। जिसको सुनकर जगद्गुरुशंकराचार्य तथासभीविद्वान् अत्यन्त प्रसन्न हुए। आपको सभामें सर्वोच्चासन दिया गया। जिस पर उस देश के प्रसिद्ध विद्वान् पं० श्रीधरशास्त्री डाशाणिया,

और थानेश्वर निवासी पट्शास्त्री गरुडध्वजहीं बैठा करते थे। अन्त में ब्रह्मचारी गंगास्वरूपजी की तरफ से आपको १००) सौ रुपये एक दुशाला मिला। ठीक है—"गुणाः पूजास्थानं गुणिषु नच लिंगं नच वयः।"। इस महान् सम्मान से आपकी कीर्ति सर्वत्र फैल गई, और आप सब विषयों के प्रकाण्ड विद्वान् गिने जाने लगे। इसके बाद ही आपने साम्भलीग्रामनिवासी पं० भिक्षारामजी की सुपुत्री श्रीमती भक्तिदेवी का पाणिग्रहण किया। आपका सिद्धान्त है कि—"असमापितविद्यस्य स्त्री चिन्ता का मनस्विनः। अनाक्रम्य जगत् सर्वं नो सन्ध्यां भजते रविः॥ १९८३ विक्रमाब्दमें आप लावलाशेखु पुराग्राम से सम्बन्ध तोड़कर पवित्र कुरुक्षेत्र भूमि के ही मध्यवर्तिरिटोली ग्राम में आवसे। यहाँ आपने अपने द्रव्य से वहुत जमीन खरीदी। और एक रहने का मकान तथा एक शिवमंदिर बनवाया। यह ग्राम जीन्द से १२ कोश पूर्व की ओर है। उस देश के निवासी आपका बड़ा सम्मान करते हैं। ठीक भी है—"यस्मिन् देशे वसेद् विद्वान् धर्मशास्त्रोपदेशकः। सोऽपि देशोभवेत्पूतः किं पुनस्तस्य बान्धवाः॥ आप सदा सब के प्रति यही उपदेश किया करते हैं—"ग्रामेग्रामे पाठशाला ग्रामे ग्रामे च मन्दिरम्। ग्रामे ग्रामे धर्मसभा ग्रामे ग्रामे कथाः शुभाः॥ "परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते। जातस्तु गण्यते सोऽत्र यो विद्वान् यश्च भक्तिमान्॥ ईश्वरचन्द्रविद्यासागर की तरह आप भी केवल विद्यासागर ही नहीं हैं किन्तु दया के भी सागर हैं। एक समय आप भ्रमण करते करते मेड़ता शहर में गये, वहां मीरां बाई के चतुर्भुज मन्दिर में आपके कई भाषण हुए। उनमें अन्य नागरिकों के साथ एक नाजिम साहिब भी आते थे। एक दिन आप कचहरी में नाजिम साहिब के पास पहुँच गये। नाजिम ने बड़ा सत्कार किया और कहने लगे कि मेरे योग्य कोई सेवा फरमाओं। नाजिम साहिब उस समय एक गरीब ब्राह्मण पर सौ रुपये जुर्माना कर रहे थे। आपने कहा कि हो सके तो इस

ब्राह्मणका जुर्माना छोड़ दो, यही आपकी परम सेवा है। नाज़िमने वैसा ही किया। पंजाब सनातनधर्म प्रतिनिधि सभा लाहौर के प्रधान मंत्री गोस्वामी गणेशदत्तजी के अनुरोध से संस्कृत कालेज लायलपुर में आप प्रिंसिपल पद पर नियुक्त होकर गये। वहां की जनता आपकी गीता तथा भागवत की कथा सुन कर मुग्ध हो गई। आपकी वाणी में मधुरता तथा सत्यता भी खूब है। ठीक लिखा है—'प्रसन्नाः कान्तिहारिण्यः सत्यभाषणसंयुताः। भवन्ति कस्यचित्पुण्यैर्मुखे वाचो गृहे स्त्रियः॥ "वदनं प्रसाद सदनं सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः। करणं परोपकरणं येषां केषां न ते वन्द्याः॥ लायलपुर के एक सेठ लाला सानूरामजी एक दिन आपको अपने घर ले गये। बहुत सत्कार करने के बाद पति और पत्नी दोनों बोले—कि महाराज! हमारे घर में पुत्र नहीं कोई उपाय बताओ। विद्यासागरजी ने उनको पुत्र होने का आशीर्वाद दिया। दसवें महीने पुत्र हुआ। निरभिमानिता के तो आप आदर्श हैं। ठीक भी है—"मूर्खस्य पंचचिह्नानि गर्वोदुर्वचनं तथा। क्रोधश्च हठवादश्च परवाक्येष्वनादरः॥ जब आप लायलपुर में पढ़ाते थे, तब एक दिन एक ब्राह्मण आप से मिलने आया। और बोला कि प्रिंसिपल कहां हैं? आपने कहा-यहां पर ही होंगे। उस ब्राह्मण ने आपको साधारण वेष से कोई नौकर समझा। अतएव वह बोला कि भाई! मैं दूर से चल कर आया हूँ मेरी चरण सेवा करो। आपने घण्टों तक ब्राह्मण की चरण सेवा की। जब सारे विद्यार्थी बाहर से आये, तब पता लगा कि आप ही यहां के प्रिंसिपल हैं। वह ब्राह्मण क्षमा मांगने लगा॥ विद्यार्थियों पर आप बड़ा प्रेम रखते हैं। एक दिन एक विद्यार्थी आकर आप को कहने लगा कि मैं एक परीक्षा में दो बार फेल हो चुका हूँ। कृपा करके बतलाइये क्या उपाय करूं? आपने कहा-ग्यारह दिन रुद्राभिषेक करो। उसने वैसा ही किया और परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया। गौओं के भी आप परम भक्त हैं। जब कहीं

मार्ग में भी गौ मिल जाती है तब भी आप जूती निकाल कर प्रणाम किये बिना आगे नहीं चलते। "अमन् संपूज्यते राजा अमन् संपूज्यते द्विजः। अमन् संपूज्यते साधुः" इस पद्य के अनुसार एक स्थान में अधिक रहना आप को पसन्द नहीं। अतएव लायलपुर से भी आप कुछ ही वर्षों के बाद भारत की राजधानी देहली में आये। जिसके विषय में "पुष्पेषु मल्ली नगरीषु दिल्ली" यह प्रसिद्धि है। म० म० हरनारायणशास्त्रीजी तथा पं० मुखरामजी के अनुरोध से देहली में आपने श्रीगौरीशंकर मंदिर में कई वर्षों तक अध्यापन कार्य तथा कथा की। आपने स्वयं लिखा है—"छात्रानध्यापयितुं भागवतादेः कथाश्च वाचयितुम्। पर्यटित बहुलदेशो विदुषांमध्ये महासनेऽस्तिहम्। संप्रति दिल्लीनगरे यमुनातटपावने जगन्मान्ये गौरी-शंकरमन्दिरविद्यालयपाठकः कथां कुर्वे॥ देहली की कई सभाओं में आप सभापति बने। और आपके पाण्डित्यपूर्ण भाषण हुए। जब स्व० लोकमान्यतिलक के स्वराज्य मतानुयायि वर्तमान महात्मा गान्धी के 'अछूतोद्धार' और 'मन्दिर प्रवेश' बिल के खण्डनार्थ म० म० लक्ष्मणशास्त्रीजी द्रविड़ काशी से देहली आये थे। तब सर्वप्रथम आप से ही गौरीशंकर मंदिर में मिले थे। आप से बिलों के विरुद्ध देहली में आन्दोलन करने की प्रार्थना की थी। कुछ दिनों के बाद "वर्णाश्रमस्वराज्यसंघ" का देहली में प्रथमाधिवेशन हुआ। जिसमें भारतवर्ष के काशी काशमीर, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, पंजाब, मारवाड़, मेवाड़, आदि प्रान्तों के विद्वान् सम्मिलित हुए थे। और गोवर्धन मठाधीश जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीभारती कृष्ण तीर्थजी, और काञ्ची के प्रतिवादि भयंकर श्रीअनन्ताचार्यजी स्वामी सभापति बने थे। सभा के प्रधान मंत्री देवनायकाचार्यजी के अनुरोध से विद्यासागरजी ने एक बड़ा ही सुन्दर संस्कृत हिन्दी पद्यमय अभिनन्दन पत्र छपवाकर भेंट में दिया था। उसमें से कुछ पद्य ये हैं—"राजति महामहोत्सवेन दिल्लीनगरं येन। भवतु सदैव स

शंकरानन्त कृपातिशयेन ॥ "शंकरः शंकरः साक्षादनन्तोऽपि स्वयं हरिः । तयोः सम्मेलने जाते विजये कोऽत्र संशयः ॥ "वर्णाश्रम के धर्म का जहां होत सम्मान है । उस जाति उस देश में सुख सम्पत्ति महान् है ॥ "अगर रखते ऋषियों का खून, अगर हो ऋषियों के अंशी । न बजने दो भारत भर में अधार्मिक नेता की वंशी ॥ "भ्रष्टाचार पन्थियों की ग्रन्थियां पडेंगी टूट. बिगड़े बिगाड़कों की कुमति नशायेगी । भारत में नगर नगर ग्राम ग्राम घर घर वर्णाश्रम धर्मकी पताका फहरायेगी ॥ "चाह नहीं है स्वर्गलोकके दिव्य सुखोंका भोग करूं । चाह नहीं है चक्रवर्ति पद पाने का उद्योग करूं । चाह यही संस्कृत हिन्दीके विद्वानों का मान करूँ । निज वर्णाश्रमधर्म वेदि पर तन मन धन वलिदान करूँ ॥ सभा में प्रत्येक पद्य के साथ करतल ध्वनि हुई । तदनन्तर आपने दोनों बिलों के विरोध में वोसियों लेख काशी के पण्डित पत्र में और बम्बई के श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार पत्र में प्रकाशित करवाये । वर्तमान राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू के "असवर्ण विवाह" आदि चारों बिलों का भी आपने घोर विरोध किया । भारत का कोई भी ऐसा संस्कृत या हिन्दी समाचार पत्र नहीं है, जिसमें आपके लेख न छपते हों । आप संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् होते हुए भी हिन्दी भाषाके परमप्रेमी तथा प्रसिद्ध लेखक हैं । आपका दिन रात्रिमय सम्पूर्ण समय लिखने पढ़ने में ही व्यतीत होता है । लोक व्यवहारसे आप बहुत कम काम रखते हैं । ठीक भी है—"काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम् । व्यसनेन तु मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ॥ "भक्तिर्भवे न विभवे व्यसनं शास्त्रे न युवतिकामास्त्रे, चिन्ता यशसि न वपुषि प्रायः परिदृश्यते महताम् ॥ "दानं वित्तादृतं वाचः कीर्तिधर्मौ तथायुषः । परोपकरणं कायादसारा-त्सारमाहरेत् ॥ इन पद्यों के अनुसार आपने काव्यों में सुलतान चरित्र काव्य, और दुर्गाभ्युदयनाटक, लिखा । जिनके देखने से आपका कविरत्नत्व प्रकट होता है । इन दोनों के विषय में हम

आपके ही दो पद्य उद्धृत करते हैं—'अनुप्रासिनि सन्दर्भे छज्जूराम-समोऽद्य कः । पुराप्यासन्न चेदासन् द्वित्रा एव कवीश्वराः ॥ "छज्जूराम-कृतौ नैकः स श्लोकः परिदृश्यते । अल्पाऽनल्पाथवा यत्र नैव काचित् चमत्कृतिः ॥ सुलतान चरित के विषय में प्रयाग के सरस्वती सम्पादक आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदि महोदय की सम्मति है कि "यह काव्य नव्य होने परभी प्राचीन महाकाव्योंकी पूर्ण समता रखता है । दुर्गाभ्युदय नाटक की काशी के सूर्योदय पत्र में काव्यतीर्थ पं० अवधेशप्रसादजी ने बहुत प्रशंसा की है । काव्यप्रकाश, रसगंगाधर और साहित्य दर्पण के आप सर्वोच्च विद्वान् माने जाते हैं । इन्हीं ग्रन्थों का सार लेकर साहित्य विषय का ग्रन्थ आपने "साहित्य-विन्दु" लिखा जो कि वहुत प्रसिद्ध है । हिन्दी में आपके ग्रन्थ 'व्याख्यान—पच्चीसी' और "कुरुक्षेत्र माहात्म्य टीका हैं ।" न्याय में आपने न्यायसिद्धान्तमुक्तावली की टीका मूलचन्द्रिका लिखी । पञ्चनदीय पण्डित नृसिंहदेवजी शास्त्री ने अपनी मुक्तावली की टीका में इस टीका से बहुत सहायता ली है । और शब्द खण्डके गुणनिरूपणमें इस टीका का नाम भी दिया है । दर्शनों में आपने न्यायदर्शन और वेदान्तदर्शन की वृत्ति बनाई । न्यायवृत्ति की आलोचना करते हुए काशी के दर्शनकेसरी पंडित गोपालशास्त्रीजीने लिखा है कि "अहन्तु परीक्षाध्यक्षान्वच्मि यदि ते दर्शनमध्यमायां विश्वनाथवृत्तिस्थाने इमां वृत्तिं पाठ्येनिर्धारयेयुस्तदा महाँ ल्लाभः स्याच्छात्राणामिति । व्याकरण विषयपर आपने सिद्धान्तकौमुदी की टीका प्रकाश लिखकर व्याकरण जगत्में एक नया आविष्कार किया है । और निरुक्तकी टीकाभी आपकी ऐसी ही बनी है । पुरातत्त्वज्ञान संवन्धी ग्रन्थ आपका सव्याख्यान "छज्जूरामशतकद्वय" है । इस एक ही ग्रन्थके देखने से आपकी विद्यासागरता का परिचय हो जाता है । और भी आप कई ग्रन्थोंकी सरलटीका वना रहे हैं । वास्तव में आपकी प्रतिभा सर्वतन्त्र स्वतन्त्र हैं । भट्टवन्धुओंने आपके

विषय में ठीक लिखा है—"स्वतन्त्रा सर्वतन्त्रेषु यस्य धीरवगाहते । नमस्तस्मै छज्जूराम विद्यासागरशास्त्रिणे ॥ शास्त्रार्थमें आपनेअनेक परिडतों को जीता यह शक्ति आप में बड़ी प्रबल है । लाहौरके ओरियटल-कालेजाध्यापक म० म० पंडित शिवदत्तजी कन्याओं का यज्ञोपवीत संस्कार होना मानते थे, परन्तु आपसे इस विषय में शास्त्रार्थ करके हार गये। लाहौर में उसी कालेज के अध्यापक कवि-तार्किक पंडित नृसिंहदेवजी शास्त्रीका न्याय के ईश्वर विषय पर आपसे शास्त्रार्थ हुआ। अन्तमें पं० माधवशास्त्री भाण्डारीने और अमृतसर के प्रसिद्ध परिडत हरदत्तजीने आपका ही पक्ष ठीक बतलाया। इसी प्रकार वृन्दावनमें एक प्रसिद्ध वैष्णवको और काशीके कई व्याकरणाचार्यों को आपने शास्त्रार्थ में जीता। षड्दर्शनाचार्य स्वामी विश्वेश्वराश्रमजी आपके लिए गङ्गातट नरवरसे यह लिखते हैं—'श्रीमत्सु प्रचण्डपाण्डित्योन्मूलितवादिगजेन्द्रेषु दार्शनिकशिरोरत्नेषु विद्यासागरपदालंकृतेषु-श्रीछज्जूरामशास्त्रिवर्येषु श्रीविश्वेश्वराश्रमप्रयुक्ता नारायणेति वाचो विराजन्ताम् । श्रीमत्प्रहिता न्यायसूत्रवृत्तिर्मया समुपलब्धा । इयं मम सम्मतेति ॥ आपकी विद्वत्ता पर प्रसन्न होकर "भारतधर्म महामण्डल" काशी ने आपको "परिडतभूषण" पदवी दी। गोवर्धन मठ के जगद्गुरु शंकराचार्य जीने आपकी बनाई हुई पुस्तकों को देखकर आपको विद्यासागर पदवी दी। "अत्यन्तप्रिय पण्डितछज्जूरामशास्त्रि श्रेयसे श्रीनारायणस्मरणसंसूचितसप्रेमाशिषः समुल्लसन्तुतराम् । युष्मद् विरचितपुस्तकान्यद्राक्ष्महि । गीर्वाणवाणीप्रचुरप्रचारविरहेऽस्मिन् कलिकाले तत्प्रचारकृते युष्मद्विधीयमाने दृगुद्यमवीक्षणेनालप्स्महि मुदं महतीमतो युष्मदुचितां विद्यासागरपदवीं वयं वितराणयामः । प्रयुञ्ज्महे चाशिषो यौष्माकीनसार्वत्रिकसार्वदिक्सर्वप्रकारकैहिकामुष्मिकपारमार्थिकश्रेयः कृते" इति श्रीजगद्गुरुशंकराचार्य श्रीभारतीकृष्णतीर्थ स्वामी गोवर्धन मठ जगन्नाथ। काशी हिन्दुविश्वविद्यालय के कुलपति मालवीयजी ने आप की पुस्तकों

का बड़ा सम्मान किया। १९९३ में जयपुरमें राजपण्डित मधुसूदन जी के अभिनंदनके उपलक्ष्य में, जो निखिल भारतीय विद्वत्सम्मेलन हुआ था। उसमें सब विषयों का शास्त्रार्थ भी रक्खा था। रसगंगाधर, व्युत्पत्तिवाद और दर्शनविषयक शास्त्रार्थ के निर्णायक तथा सर्वोच्चासनाधिकारी श्रीविद्यासागरजी, और म०म० हाथीभाई शास्त्री जामनगर काठियावाड़, तथा म० म० मथुराप्रसाद जी सोलन, ही किये गये थे। पं० राधेश्याम कथावाचक बरेली के मङ्गलगायनानन्तर सभापतिका आसन बंबईके गोस्वामी श्रीगोकुलनाथ जीने ग्रहण किया था। म०म० गिरिधरशर्मा जीके अनुरोध से आपने "सुरभारती" नामक अपना सर्वोच्च निबन्ध सभामें पढ़ कर सुनाया। जिसके प्रत्येक पद्यके साथ करतलध्वनि हुई। अनन्तर भट्ट मथुरानाथ शास्त्रि प्रभृति बीसियों विद्वानों ने अपने २ निबन्ध पढे। रात्रि में वहाँ के एक प्रतिष्ठित मन्दिर में आप का दो घण्टे तक विवाह—संस्कार पर सर्वोच्च भाषण हुआ। सबसे अधिक अध्यापनकार्य आपने प्रिंसिपल पद पर नियुक्त होकर—"राधाकृष्ण संस्कृत कालेज" महेन्द्रगढ़ में किया। जैसा कि इन्होंने एक जगह स्वयं लिखा है—"पटियालाप्रान्तवर्ति-महेन्द्रगढपत्तने। राधाकृष्णोऽभवच्छेष्ठी धर्मात्मा धनिकाग्रणी: ॥ तेन संस्कृतकालेज: स्थापितो-निजनामत:। तस्मिन्नहं प्रधान: सन्सर्वशास्त्राणि पाठये ॥ इस कालेजके वर्तमान मालिक सेठ सादीराम गंगाप्रसाद, फ्लोरमिल कानपुर, आपके परम भक्त हैं। विद्यासागर जी की धर्मपत्नी भक्तिदेवी पठित लिखित साध्वी स्त्री है। और पठित लिखित एक सुशीला कन्या है। ३८ वर्ष की अवस्था में आप को एक प्रतिभाशाली पुत्ररत्न प्राप्त हुआ) परन्तु दुःख है कि वह बाल्यावस्था में चल बसा। आश्चर्य कारक घटना यह हुई कि मृत्यु के दिन रात्रिमें, मृतबालक सुशील, पिता के स्वप्न में आया और कहने लगा कि आप अधिक चिन्ता न करो, मैं बहुत ही शीघ्र भगवान् से पूर्णायुः प्राप्त करके

इन्हीं माता जी से जन्म लूँगा। आप मेरी प्राप्ति निमित्त–शिव-प्रदोष व्रत किया करें। "यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्। तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥ भगवान्—श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द कन्द के इस वाक्य को सत्य करते हुए वालक सुशील ने सोमवार को होने के कारण सोमदत्त नाम से पुनर्जन्म लिया आशा है यह वालक–अपने पिता के समान ही विद्वान् वनेगा। क्योंकि "कारणगुणाः कार्यगुणामारभन्ते" यह न्याय है। विद्यासागर जीका कुल विद्वत्ता में जगन्मान्य है। सम्प्रति आप सकुटुम्ब राधाकृष्ण—संस्कृत पाठशाला (सरस्वती फाटक) काशी में विराजमान हैं और षट् शास्त्र पढ़ारहे हैं। आपके शिष्यों में से कुछ के नाम ये हैं—मिश्ररामनारायण शास्त्री साहित्याचार्य महेन्द्रगढ़। पं० मुरलीधर शास्त्री महेन्द्रगढ़। प्रो० रामधन शास्त्री एम्०ए० देहली। पं०ओंकारदत्तशास्त्री डेरोली। भट्ट मामनचन्द्रशास्त्री चन्द्राणा। पं० चित्रभानुशास्त्री वहरोड़। पं० वनवारीलालशास्त्री जागूवास। पं० गजाननशास्त्री महेन्द्रगढ। पं०हरनारायणशर्मा न्याय शास्त्री कांसली। पं० विश्वेशशर्मान्यायशास्त्री शिमला। पं० पुरुषोत्तमशास्त्री नारनौल। पं० विश्वम्भरदत्तशास्त्री दुर्गूकानाँगल। पं० केदारनाथशास्त्री राता, पं०दुर्गादत्तशास्त्री सैदपुरपं०शिवकुमार व्याकरण शास्त्री काशी। पं० हेतरामशर्मात्मज भवानीशंकर शास्त्रीखाएडा, उदय शंकर पिता भट्टरामकृष्णशास्त्री विद्याभूषण रिटोली पं० चन्द्रगोमीविशारद पं०रामचन्द्र विशारद, पं० हरिकृष्ण विशारद,पं० सन्तलाल विशारद, पं० वद्रीप्रसाद विशारद॥

शुद्धाशुद्धिपत्रम् ।

पृष्ठः	पंक्तिः	अशुद्धयः	शुद्धयः
५	२४	भाष्य लिखा	पाणिनि समकालीन शौनक शिष्य व्याडि के संग्रहानुसार भाष्य लिखा।
७	१५	त्रिंशच्छतकानि	सप्तत्रिंशच्छतानि
७	२३	गोविन्द्र	गोविन्द
१२	१२	१८३५	१८००
१५	१	विधात्रीर्यंयो	विधात्रोर्यंयो
२०	२१	हर्ष चरितके षष्ठ परिच्छेद से इस विक्रम का भी शकारि होना सिद्ध होता है।	
२१	५	गतवति कीर्तिशेषं	कीर्तिशेषं गतवति
२२	१८	षट्त्रिंशच्छतकानि (५९६)	सप्तत्रिंशच्छतानि (६९६)
२२	१६	और (५८०) अयनांश	
२५	१३	स्त्रीयद्वाणी	स्त्रीव यद्वाणी
२५	१६	चालुक्य द्वितीय पुलकेशी के हाथ से	
२६	१६	दडूयाचार्यस्य	दण्ड्याचार्यस्य
३१	१०	११३८	११८३
३४	६	सुभापितः	सुभाषितैः
३६	८	वर्तमाय	वर्तमान
३६	५	मुञ्जाके	मुंज के
४१	५	भरो हि	भारो हि
४७	२	उद्धाधार	उद्धार
४८	५	गजदुत्पत्ति	जगदुत्पत्ति
५२	६	परिस्कार	परिष्कार

पण्डितछज्जूरामवि[illegible]
प्रणीतपुस्तका[illegible]

१—न्यायसिद्धान्तमुक्तावली
मूलचन्द्रिकानामकपरीक्षोपयोगि[illegible]

२—न्यायदर्शनम्
परीक्षोपयोगिसरलवृत्तिसहितम् ॥)

३—सुलतानचरितकाव्यम् ॥)

४—साहित्यविन्दुः
साहित्यशास्त्रे प्रवेशाय प्रथमं पुस्तकम् । ॥)

५—दुर्गाभ्युदयनाटकं
गद्ये पद्ये च सर्वत्रैवानुप्रासभरितम् । ॥)

६—सिद्धान्तकौमुदीप्रकाशः (यन्त्रस्थः)

७—कुरुक्षेत्रमाहात्म्यटीका (यन्त्रस्था)

प्राप्तिस्थानम्—
मास्टर खेलाड़ीलाल ऐराड सन्स,
संस्कृत बुकडिपो,
कचौड़ीगली, बनारस सिटी।
शाखा—मुरादपुर (चौहट्टा), बाँकीपुर,
पटना।